नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक

बिगुल

नेपाली क्रान्ति पर केन्द्रित विशेष अंक

मासिक समाचार पत्र • पूर्णांक 119 • वर्ष 10 • अंक 4
मई 2008 • तीन रुपये • 16 पृष्ठ

'बिगुल' पर पूँजीपति–पुलिस–गुण्डा गँठजोड़ का हमला

लुधियाना में 'बिगुल' संवाददाता को पुलिस ने झूठे मुकदमे में फँसाया

फैक्ट्री में ब्वायलर फटने से हताहत मज़दूरों की जानकारी लेने पहुँचे संवाददाता राजविन्दर पर फैक्ट्री मालिक ने गुण्डों से हमला कराया पुलिस ने संवाददाता को गिरफ़्तार कर हत्या का प्रयास सहित गम्भीर धाराएँ लगाईं, थाने में भी पुलिस और मालिक के गुण्डों ने पिटाई की, मज़दूरों पर पुलिस का लाठीचार्ज, रात में मज़दूर बस्ती के घरों में घुसकर महिलाओं और बच्चों सहित मज़दूरों की बर्बर पिटाई

सम्पादकीय प्रतिनिधि

औद्योगिक क्षेत्रों में बिगुल द्वारा मज़दूरों के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक चेतना के व्यापक और लगातार प्रचार से फैक्ट्री मालिकान बौखला गये हैं। उनकी बौखलाहट का अन्दाज़ा लुधियाना के एक औद्योगिक क्षेत्र में हमारे संवाददाता पर पूँजीपति–पुलिस–गुण्डा गँठजोड़ द्वारा किये गये एक खुले हमले से लगाया जा सकता है।

घटना लुधियाना के बस्ती जोधेवाल थाना क्षेत्र की है। यहाँ ताजपुर रोड महावीर कालोनी स्थित औद्योगिक क्षेत्र की एक फैक्ट्री 'वीर गार्मेण्ट्स' की डाइंग यूनिट में 21 अप्रैल की रात को ब्वायलर फटने से भीषण विस्फोट हुआ। विस्फोट इतना ज़बर्दस्त था कि पूरी फैक्ट्री ध्वस्त हो गई और आसपास की कुछ फैक्ट्रियों को भी नुकसान पहुँचा। विस्फोट में करीब आधा दर्जन मज़दूर घायल हुए थे जिनमें कुछ बच्चे भी थे। लेकिन मज़दूरों को इस बात की आशंका थी कि मलबे में कुछ लाशें दबी हो सकती हैं और पुलिस से मिलीभगत करके लाशें गायब की जा सकती हैं।

अगले दिन 22 अप्रैल को करीब दो बजे इलाके की अन्य फैक्ट्रियों के बहुत से मज़दूर फैक्ट्री गेट पर जमा हो गये और मलबा हटाए जाने की माँग करने लगे। इस दौरान पुलिस के साथ उनकी झड़प भी हुई।

विस्फोट में कई मज़दूरों के हताहत होने की खबर पाकर 'बिगुल' के संवाददाता और सामाजिक कार्यकर्ता राजविन्दर भी वहाँ पहुँचे। उन्होंने विस्फोट के कारणों और बचाव एवं राहत कार्यों के बारे में फैक्ट्री प्रबन्धन के लागों से जानकारी हासिल करनी चाही। वहाँ मौजूद नौजवान भारत सभा के कार्यकर्ताओं लखविन्दर और परमिन्दर ने भी मानवतावादी आधार पर बचाव व राहत कार्य अविलम्ब शुरू करने की बात कही। इसी दौरान अचानक मालिक के गुण्डों ने राजविन्दर पर हमला कर दिया और पुलिस की मौजूदगी में उन्हें घसीटते हुए एक प्राइवेट जीप में बिठाने लगे। लेकिन वहाँ मौजूद कुछ अन्य सामाजिक कार्यकर्ताओं और मज़दूरों द्वारा विरोध करने पर उन्हें उस समय छोड़ना पड़ा।

गुण्डों द्वारा पिटाई के बाद पुलिस जीप में हाथ बाँधकर बैठाये गये राजविन्दर

फैक्ट्री गेट पर मज़दूरों की संख्या और साथ ही तनाव भी बढ़ता गया। शाम को एक स्थानीय अख़बार के पत्रकार ने बातचीत करने के बहाने राजविन्दर को बुलाया। यह एक चाल थी। घात लगाये बैठे गुण्डों ने राजविन्दर को दबोच लिया और उन्हें घसीटते हुए फैक्ट्री के भीतर ले गये। उधर पुलिस ने मज़दूरों पर लाठीचार्ज कर दिया जिससे वे तितर-बितर हो गये।

फैक्ट्री के अन्दर दो-तीन घण्टे तक राजविन्दर को मारा-पीटा और डराया-धमकाया जाता रहा। रात लगभग नौ बजे राजविन्दर को गिरफ़्तार कर पुलिस थाने ले आयी। उनके ऊपर आईपीसी की धाराओं 307, 323, 382, 148, 149 एवं 506 के तहत फर्जी मामले ठोंक दिये गये।

उसी दिन रात को पुलिस स्टेशन में भी फैक्ट्री मालिक के गुण्डों एवं

(पेज 4 पर जारी)

नेपाल में संविधान सभा का चुनाव : एक रिपोर्ट

नेकपा (माओवादी) की जीत नेपाली जनता की जीत है

कात्यायनी / सत्यम

नेपाल में दस वर्ष तक चले जनयुद्ध और व्यापक जनान्दोलन के बाद 10 अप्रैल को हुए संविधान सभा के चुनाव में नेकपा (माओवादी) के सबसे बड़ी ताकत के रूप में उभरकर आने के साथ ही वहाँ राष्ट्रीय जनवाद के लिए संघर्ष एक नये, उच्चतर मुकाम पर पहुँच गया है।

सार्विक मताधिकार के आधार पर संविधान सभा का चुनाव नेपाल ही नहीं भारतीय उपमहाद्वीप की बहुत बड़ी घटना है। इसके महत्त्व को इस परिप्रेक्ष्य में समझा जा सकता है कि पाकिस्तान, भारत या बंगलादेश कहीं भी संविधान का निर्माण सार्विक मताधिकार से चुनी गयी संविधान सभा द्वारा नहीं किया गया। भारत में 1935 के गवर्नमेण्ट ऑफ इण्डिया ऐक्ट के तहत चुनी गयी असेम्बली को ही संविधान सभा का दर्जा दे दिया गया था और उसमें कुछ विशेषज्ञों को शामिल कर लिया गया था। उसे महज़ पन्द्रह प्रतिशत लोगों द्वारा चुना गया था। एशिया, अफ्रीका और लातिनी अमेरिका के अनेक देशों में 1960 और 70 के दशकों में उपनिवेशवाद से संघर्ष करके जो राष्ट्रीय सत्ताएँ अस्तित्व में आयीं उनमें भी सार्विक मताधिकार के जरिये जनता को संविधान बनाने में सीधी भागीदारी का मौका नहीं मिला था। संविधान निर्माण की प्रक्रिया का इतना जनवादी होना नेपाल की जनता की एक जीत है और इसका एक वैश्विक महत्त्व भी है।

चुनाव में क्रान्तिकारी शक्तियों की इस सफलता को भारत में इस रूप में पेश किया जा रहा है जैसे यह बहुत अप्रत्याशित और चौंका देने वाली घटना हो। दरअसल भारत सरकार यह मानकर चल रही थी कि नेकपा (एमाले) के साथ मोर्चा नहीं बन पाने के कारण वामपंथियों के वोट बँट जायेंगे जिसका फायदा नेपाली कांग्रेस को मिलेगा और ने.कां. अकेले या एमाले के साथ मिलकर सत्ता में आ जायेगी। नेपाल में बहुत से लोगों ने हमें स्पष्ट रूप से कहा कि इसी सोच के तहत भारत सरकार ने एमाले नेताओं पर दबाव डालकर माओवादियों से मोर्चा नहीं बनने दिया। भारतीय मीडिया भी शासक वर्ग के इसी आकलन से बुरी तरह प्रभावित था। प्रिण्ट और इलेक्ट्रोनिक मीडिया के तमाम "विशेषज्ञ" भी ऊपर-ऊपर तैरकर देख रहे थे, नेपाल की आम जनता क्या सोच रही है, इसका उन्हें अन्दाज़ा ही नहीं था। सच तो यह है कि वैकल्पिक मीडिया का हिस्सा कुछ छोटी पत्र-पत्रिकाओं और आनन्द स्वरूप वर्मा जैसे स्वतन्त्र पत्रकारों के अतिरिक्त अधिकांश मीडिया का जनता के संघर्ष के प्रति रवैया लगातार उपेक्षापूर्ण और पूर्वाग्रहों से प्रेरित रहा है और इस बार भी ऐसा ही था। वैसे, भारत ही नहीं अमेरिका और यूरोपीय साम्राज्यवादी देशों के शासक वर्ग भी नेपाल की भावनाओं को समझने में बुरी तरह गच्चा खा गये। काठमाण्डो स्थित अमेरिकी दूतावास ने तो चुनाव से कुछ ही दिन पहले एक खुफिया रिपोर्ट तैयार करायी थी जिसके मुताबिक माओवादियों को 8-10 प्रतिशत से ज्यादा वोट मिलने की सम्भावना नहीं थी। ऐसे प्रचार से प्रभावित भारत के आम लोगों के बीच भी इस तरह की सोच मौजूद थी कि नेपाली क्रान्तिकारी संघर्ष से थक कर मुख्यधारा में आ गये हैं, और जनता में लोकप्रिय नहीं हैं।

हम लोग भी जब नेपाल के लिए

(पेज 8 पर जारी)

नेपाल पर विशेष सामग्री

नेपाल का कम्युनिस्ट आन्दोलन : एक संक्षिप्त इतिहास पृ. 6

नेकपा (माओवादी) के नेता बाबूराम भट्टराई से बातचीत : एक 'नये नेपाल' के लिए पृ. 11

गाज़ियाबाद में बड़ी संख्या में गरीबों के बच्चे गायब

निठारी काण्ड जैसी घटना की आशंका

नौजवान भारत सभा और बिगुल मज़दूर दस्ता का कलक्ट्रेट पर प्रदर्शन

सीबीआई जाँच कराने की माँग, आन्दोलन की चेतावनी

बिगुल संवाददाता

गाज़ियाबाद में पिछले दिनों बड़ी संख्या में गरीबों के बच्चे गायब होने की जाँच की माँग को लेकर नौजवान भारत सभा और बिगुल मज़दूर दस्ता ने आज कलक्ट्रेट पर प्रदर्शन किया तथा मुख्यमन्त्री के नाम ज्ञापन दिया। प्रदर्शन में गायब हुए कुछ बच्चों के अभिभावक तथा क्षेत्रीय नागरिक भी शामिल थे।

विगत 9 मई को प्रदर्शन के बाद जिलाधिकारी के माध्यम से भेजे गए ज्ञापन में कहा गया है कि गाज़ियाबाद के केवल संजयनगर क्षेत्र तथा नंदग्राम क्षेत्र से ही पिछले 10 दिनों के अंदर कम से कम 12 बच्चे गायब हुए हैं। ये सभी बच्चे गरीब व्यक्तियों के हैं और उनके अभिभावकों द्वारा बार-बार थाने के चक्कर लगाने के बावजूद पुलिस ने अब तक कोई प्रभावी कार्रवाई नहीं की है। इसके अतिरिक्त निकटवर्ती कालोनियों से बच्चों की गुमशुदगी की कुछ अन्य घटनाओं की सूचनाएं भी मिली हैं।

कलक्ट्रेट परिसर में प्रदर्शन के दौरान वक्ताओं ने कहा कि इन घटनाओं के पीछे निठारी काण्ड जैसी किसी बड़ी घटना की आशंका नजर आ रही है। नौजवान भारत सभा के तपीश मेंडोला ने शासन एवं प्रशासन को आगाह किया कि पड़ोस के नोएडा में पिछले वर्ष सामने आई निठारी की जघन्य घटना के पहले भी इसी प्रकार बच्चों के गायब होने का सिलसिला चलता रहा था और पुलिस लगातार टालमटोल का रवैया अपनाती रही थी। यदि पुलिस ने बच्चों के गायब होने की रिपोर्टों पर शुरू में ही कार्रवाई की होती तो अपराधियों को पहले ही पकड़ा जा सकता था।

बिगुल मज़दूर दस्ता के कार्यकर्ताओं ने सभा में कहा कि मौजूदा पूँजीवादी व्यवस्था आदमखोर हो चुकी है। इन संगठनों ने सरकार से इन घटनाओं को संज्ञान में लेकर बच्चों का पता लगाने के लिए अविलम्ब प्रभावी कार्रवाई का आदेश देने की माँग की है जिससे कोई गम्भीर घटना होने से रोकी जा सके। ज्ञापन में माँग की गई है कि गाज़ियाबाद में गुमशुदा बच्चों की तलाश के लिए पुलिस को कड़े निर्देश दिये जाएं तथा विगत दो सप्ताह के दौरान बड़ी संख्या में बच्चों के गायब होने की घटनाओं की सी.बी.आई. से जाँच कराई जाए।

नौ.भा.स. तथा बिगुल मज़दूर दस्ता ने कहा कि यदि प्रशासन ने तत्काल कोई प्रभावी कार्रवाई नहीं की तो इस मुद्दे पर आम नागरिकों के साथ लेकर जन-आन्दोलन छेड़ा जाएगा।

प्रदर्शनकारी महिलाओं ने छुटभैया नेताओं को औकात दिखायी

चौबे गये थे छब्बे बनने, दूबे बनके आ गये

गाजियाबाद में पिछले दिनों बड़ी संख्या में गरीबों के बच्चों के गायब होने की जाँच की माँग को लेकर 9 मई को हुए प्रदर्शन के दौरान एक वाकया ऐसा घटा जिसने खून पोतकर शहीद बनने का मंसूबा पालने वाले नेताओं को उनकी औकात बता दी। हुआ यह कि नौजवान भारत सभा और बिगुल मज़दूर दस्ता के आह्वान पर संजयनगर तथा नंदग्राम क्षेत्र से जब अच्छी खासी संख्या में पुरुष और महिलाएं जुलूस और प्रदर्शन में शामिल होने के लिए घरों से निकल पड़े तो मुहल्ले के स्तर की राजनीति करने वाले कुछ चुनावी नेता भी जुलूस में हो लिए। ये महानुभाव इतने मीडियाप्रेमी थे कि जुलूस के दौरान जैसे ही मीडिया फोटोग्राफर दिखायी पड़ते थे उछलकर आगे पहुँच जाते थे। इनकी बार-बार की ऐसी हरकतों से जुलूस में शामिल महिलाएं खास तौर पर आक्रोश में आ गई। जुलूस जब कलेक्ट्रेट के निकट पहुँच ही रहा था कि एक और 'बड़े नेताजी' जाने कहाँ से फोटो खिंचाने के लिए नमूदार हो गये। इन्होंने एक अखबार के फोटोग्राफर के साथ पहले से सेटिंग कर रखी थी। लेकिन जैसे ही नेताजी जुलूस के आगे आकर खड़े हुये महिलायें उन्हें धक्का देते हुए आगे निकल गयीं। नेताजी अपना सा मुँह लेकर रह गये। मीडियाप्रेमी नेताओं को यह बेइज्जती बर्दाश्त न हुई। थोड़ी ही देर बाद संजय नगर क्षेत्र के पार्षदपति अपने दस-पन्द्रह चेलों के साथ आये और जुलूस पर धावा बोल दिया। लेकिन जुलूस में शामिल लोग, खासकर महिलायें, इस हमलावर गिरोह पर भारी पड़ीं। प्रदर्शनकरियों के जवाबी हमले से वे भाग खड़े हुए। इसके बाद पार्षदपति ने फोन करके पुलिस को भेज दिया। पुलिस बिना मामले की छान-बीन किये नौभास के कुछ कार्यकर्ताओं को जीप में बिठाकर थाने ले जाने लगी लेकिन महिलायें भी जब कार्यकर्ताओं के साथ जीप में बैठकर थाने जाने की ज़िद करने लगीं तो दरोगा बचाव की मुद्रा में आ गये और उन्होंने जुलूस को कलेक्ट्रेट तक सकुशल जाने दिया।

प्रदर्शन से जब नौभास कार्यकर्ता अपने कार्यालय वापस लौटे तो स्थानीय पुलिस चौकी से एक फोन आया। बताया गया कि आप लोगों के खिलाफ एक एफ.आई.आर. दर्ज करायी गयी है। नौभास के स्थानीय संयोजक जब कविनगर थाने पहुँचे और उन्होंने वहाँ मौजूद इंस्पेक्टर को पूरी घटना बतायी और उनकी भी एफ.आई.आर दर्ज करने के लिए कहा तो उल्टे उन्हें उठाकर हवालात में बन्द कर दिया गया। जब इसकी जानकारी कुछ स्थानीय पत्रकारों को मिली, जो समूचे घटनाक्रम के दौरान मौजूद थे, और उन्होंने थाने की पुलिस के भेदभावपूर्ण रवैये के खिलाफ उच्चाधिकारियों से शिकायत करने की बात कही तो इंसपेक्टर महोदय बचाव की मुद्रा में आ गये और पार्षदपति को बुलाकर जमकर हड़काया जिससे 'नेताजी' मोम की तरह पिघल गये और अपने बाल-बच्चों का वास्ता देकर छोड़ देने की चिरौरी-मिन्नत करने लगे। बाद में इंस्पेक्टर ने दोनो पक्षों के बीच लिखित समझौता कराकर छोड़ दिया।

इस समूचे घटनाक्रम की जानकारी 'नेताजी' के मुहल्ले तक पहुँच चुकी है। पता चला है कि नेताजी मुँह छिपाते फिर रहे हैं। लोग कह रहे हैं कि 'चौबे गये थे छब्बे बनने, दूबे बनके आ गये'।

दो ज़रूरी बिगुल पुस्तिकाएँ

शिकागो के शहीद मज़दूर नेताओं की कहानी
मूल्य : 10.00

मज़दूर नायक, क्रान्तिकारी योद्धा
मूल्य : 10.00

शिड्यूल

घोषणापत्र का प्रपत्र : प्रपत्र 4

समाचार पत्र का नाम	नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक बिगुल
पत्र की भाषा	हिन्दी
आवर्तिता	मासिक
पत्र का खुदरा बिक्री मूल्य	तीन रुपये
प्रकाशक का नाम	डॉ. दूधनाथ
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	69, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड, निशातगंज, लखनऊ
प्रकाशन का स्थान	निशातगंज, लखनऊ
मुद्रक का नाम	डॉ. दूधनाथ
पता	69, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड, निशातगंज, लखनऊ
मुद्रणालय का नाम	वाणी ग्राफिक्स, अलीगंज, लखनऊ
सम्पादक का नाम	डॉ. दूधनाथ, सुखविन्दर, राकेश
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	69, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड, निशातगंज लखनऊ
स्वामी का नाम	डॉ. दूधनाथ
राष्ट्रीयता	भारतीय

मैं दूधनाथ, यह घोषणा करता हूँ कि उपर्युक्त तथ्य मेरी अधिकतम जानकारी के अनुसार सत्य हैं।

हस्ताक्षर
(दूधनाथ)
प्रकाशक, मुद्रक, स्वामी

बिगुल का स्वरूप, उद्देश्य और जिम्मेदारियाँ

1. 'बिगुल' व्यापक मेहनतकश आबादी के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक शिक्षक और प्रचारक का काम करेगा। यह मज़दूरों के बीच क्रान्तिकारी वैज्ञानिक विचारधारा का प्रचार करेगा और सच्ची सर्वहारा संस्कृति का प्रचार करेगा। यह दुनिया की क्रान्तियों के इतिहास और शिक्षाओं से, अपने देश के वर्ग संघर्षों और मज़दूर आन्दोलन के इतिहास और सबक़ से मज़दूर वर्ग को परिचित करायेगा तथा तमाम पूँजीवादी अफवाहों-कुप्रचारों का भण्डाफोड़ करेगा।

2. 'बिगुल' देश और दुनिया की राजनीतिक घटनाओं और आर्थिक स्थितियों के सही विश्लेषण से मज़दूर वर्ग को शिक्षित करने का काम करेगा।

3. 'बिगुल' भारतीय क्रान्ति के स्वरूप, रास्ते और समस्याओं के बारे में क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों के बीच जारी बहसों को नियमित रूप से छापेगा और स्वयं ऐसी बहसें लगातार चलायेगा ताकि मज़दूरों की राजनीतिक शिक्षा हो तथा वे सही लाइन की सोच-समझ से लैस होकर क्रान्तिकारी पार्टी के बनने की प्रक्रिया में शामिल हो सकें और व्यवहार में सही लाइन के सत्यापन का आधार तैयार हो।

4. 'बिगुल' मज़दूर वर्ग के बीच लगातार राजनीतिक प्रचार और शिक्षा की कार्रवाई चलाते हुए सर्वहारा क्रान्ति के ऐतिहासिक मिशन से उसे परिचित करायेगा, उसे आर्थिक संघर्षों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों के लिए भी लड़ना सिखायेगा, दुअन्नी-चवन्नीवादी भूजाछोर (कम्युनिस्टों) और पूँजीवादी पार्टियों के दुमछल्ले या व्यक्तिवादी-अराजकतावादी ट्रेडयूनियनबाजों से आगाह करते हुए उसे हर तरह के अर्थवाद और सुधारवाद से लड़ना सिखायेगा तथा उसे सच्ची क्रान्तिकारी चेतना से लैस करेगा। यह सर्वहारा की क़तारों से क्रान्तिकारी भरती के काम में सहयोगी बनेगा।

5. 'बिगुल' मज़दूर वर्ग के क्रान्तिकारी शिक्षक, प्रचारक और आह्वानकर्ता के अतिरिक्त क्रान्तिकारी संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता की भी भूमिका निभायेगा।

नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक बिगुल

सम्पादकीय कार्यालय	: 69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006
सम्पादकीय उपकार्यालय	: जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ
दिल्ली सम्पर्क	: बी-108, मुकुन्द विहार, करावल नगर, दिल्ली-94 फ़ोन : 011-65976788
ईमेल	: bigul@rediffmail.com

मूल्य : एक प्रति रु. 3.00 वार्षिक रु. 40.00 (डाक खर्च सहित)

बिगुल

'जनचेतना' की सभी शाखाओं पर उपलब्ध :
1. डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020
2. जनचेतना स्टाल, काफ़ी हाउस बिल्डिंग, हजरतगंज, लखनऊ (शाम 5 से 8 बजे तक)
3. जाफरा बाजार, गोरखपुर-273001
4. 16/6, वाद्यम्बरी हाउसिंग स्कीम अल्लापुर, इलाहाबाद
5. जनचेतना सचल स्टाल (ठेला) चौड़ा मोड़, नोएडा (शाम 5 से 8)

मेहनतकश साथियों के लिए ज़रूरी कुछ पुस्तकें

कम्युनिस्ट पार्टी का संगठन और उसका ढांचा –लेनिन	5/-	क्यों माओवाद?	10/-
मकड़ा और मक्खी –विल्हेल्म लीब्कनेख्त	3/-	मई दिवस का इतिहास	5/-
ट्रेड यूनियन काम के जनवादी तरीके –सर्जी रोस्तोवस्की	3/-	अक्टूबर क्रान्ति की मशाल	12/-
अनवश्वर है सर्वहारा संघर्षों की अग्निशिखाएँ	10/-	पेरिस कम्यून की अमर कहानी	10/-
समाजवाद की समस्याएँ, पूँजीवादी पुनर्स्थापना और महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति	12/-	पार्टी कार्य के बारे में	15/-
		जनता के बीच पार्टी का काम	30/-

बिगुल विक्रेता साथी से माँगें या इस पते पर 17/- रजिस्ट्री शुल्क जोड़कर मनीआर्डर भेजें : जनचेतना, डी-68, निराला नगर, लखनऊ

'बिगुल' के पाठकों, हमदर्दों, शुभचिन्तकों से एक अपील

साथियो!

लुधियाना में 'बिगुल' संवाददाता साथी राजविन्दर पर पूँजीपति, पुलिस, गुण्डा गँठजोड़ का हमला कोई अचरज की बात नहीं है। देश के औद्योगिक क्षेत्रों में इस गँठजोड़ द्वारा मज़दूरों की आवाज़ दबाने की कोशिशें लगातार जारी ही रहती हैं। जिन्हें दुनिया के इस ''सबसे बड़े लोकतन्त्र'' के बारे में भ्रम हो उन्हें औद्योगिक क्षेत्रों में जाकर देखना चाहिए तब उन्हें समझ में आ जायेगा कि हर पूँजीवादी जनतन्त्र केवल पूँजीपतियों के लिये जनतन्त्र होता है। मेहनतकश जनता के लिए यह तानाशाही ही हाता है। जहाँ कहीं भी मज़दूर अपने अधिकारों के लिए संगठित होने की शुरुआत करते हैं तो पूँजीपति मालिकान शुरू में ही हमला बोल देते हैं। लेकिन सबसे ज़्यादा वे डरते हैं मज़दूरों के अन्दर राजनीतिक चेतना के प्रचार से। जैसे ही उन्हें यह भनक लगती है कि मज़दूरों के अन्दर वर्ग-राजनीति की चेतना के प्रचार की कोई संगठित कोशिश हो रही है तो उस औद्योगिक क्षेत्र के समूचे पूँजीपति मालिकान एकजुट हो जाते हैं और शासन-प्रशासन से मिलकर उस कोशिश को जड़ जमाने से पहले ही उखाड़ फेंकने के लिए हर मुमकिन तरीके से हाथ-पैर मारना शुरू कर देते हैं। राजविन्दर की गिरफ्तारी के समूचे प्रकरण में लुधियाना के फैक्ट्री मालिकों और स्थानीय जिला एवं पुलिस प्रशासन की जो एकजुटता दिखयी दे रही है वह इसी सच्चाई का ज़ाहिर कर रही है।

लुधियाना के फैक्ट्री मालिकों की नज़र में 'बिगुल' इसलिए ख़तरनाक बन चुका है कि वह केवल मज़दूरों की आर्थिक लड़ाई की बात नहीं करता। वह उनके अन्दर क्रान्तिकारी राजनीतिक चेतना का प्रचार करता है। मज़दूर वर्ग को केवल दुवन्नी-चवन्नी की लड़ाइयों में उलझाये रखने वाले ट्रेड यूनियन धन्धेबाजों से आगाह करता है। 'बिगुल' मज़दूर वर्ग को उसके ऐतिहासिक मिशन से परिचित कराता है। उसके उपर इतिहास ने हर प्रकार के शोषण और उत्पीड़न से इंसानियत को आज़ाद कराने की ज़िम्मेदारी सौंपी है। इस मक़सद को हासिल करने के लिए उसे सबसे पहले क्रान्तिकारी जनसंघर्ष के ज़रिए राजनीतिक सत्ता की बागडोर अपने हाथों में लेनी होगी। 'बिगुल' ने अपने अंकों में पूँजीवाद-साम्राज्यवाद के असली चरित्र, भूमडलीकरण की जनविरोधी नीतियों, पूँजीवादी न्यायपालिका और पूँजीवादी जनवाद की असलियत का भंडाफोड़ करते हुए लगातार सामग्री प्रकाशित की है। लुधियाना में पिछले पाँच वर्षों से मज़दूरों की व्यापक आबादी के बीच लगातार 'बिगुल' के वितरण ने पूँजीपति मालिकान और पुलिस व प्रशासन के कान खड़े कर दिये हैं। 'बिगुल' में प्रकाशित सामग्री उन्हें किसी विस्फोटक सामग्री से कम नहीं लगती होगी। उन्हें यह आशंका सताने लगी है कि 'बिगुल' की चिंगारी सचमुच कहीं आग न लगा दे। इसलिए उन्होंने मौका पाकर इस चिंगारी को बुझाने की हताशापूर्ण कोशिश की है।

क़रीब चार साल पहले इसी तरह की एक कोशिश नोएडा के एक मगरूर कारखानेदार ने की थी। शाही एक्सपोर्ट कम्पनी के मैनेजमेण्ट ने कम्पनी गेट के सामने 'बिगुल' का वितरण कर रहे कुछ साथियों को पुलिस से साठ-गाँठ कर हवालात भिजवा दिया था। लेकिन ऐसी हर घटना मज़दूरों के दिलों में 'बिगुल' की जगह और गहरी कर देती है। लुधियाना में राजविन्दर की गिरफ्तारी के बाद आक्रोशित लगभग तीन सौ मज़दूरों ने उपायुक्त कार्यालय पर ज़ोरदार प्रदर्शन कर इसी सच्चाई को ज़ाहिर किया है कि दमन जितना अधिक बढ़ता है प्रतिरोध और सशक्त हो उठता है। यह सही है कि स्थानीय पूँजीपति-पुलिस-गुण्डा गँठजोड़ ने जो आतंकराज मचा रखा है उसका खौफ व्यापक मज़दूर आबादी के बीच से पूरी तरह निकलने में वक्त लगेगा लेकिन ऐसी घटनाओं के खिलाफ अगर मौजूदा एकजुटता और ताकत के दम पर जुझारू प्रतिरोध संगठित किया जाये तो वह दिन बहुत दूर भी नहीं होगा। यह एक अच्छा संकेत है कि लुधियाना में 'बिगुल' पर हमले के खिलाफ मज़दूरों ने एकजुट होकर आवाज़ उठायी है। यह भविष्य का एक इशारा है।

हम इस बारे में किसी भ्रम में नहीं है कि भविष्य में 'बिगुल' पर हमले नहीं होंगे। आने वाले दिनों में ये और भी बढ़ेंगे। जैसे-जैसे विश्व पूँजीवादी व्यवस्था का संकट गहरायेगा मज़दूर वर्ग को और अधिक बर्बरता के साथ निचोड़ेगा और नतीजतन मज़दूरों का प्रतिरोध भी प्रचण्ड होता जायेगा। इसे कुचलने के लिए मालिकान भी अपने हमले तेज़ कर देंगे। हमें पूरा विश्वास है कि ऐसे हर हमले के वक्त 'बिगुल' के पाठकों-हमदर्दों-शुभचिन्तकों की सक्रिय एकजुट शक्ति हमेशा की तरह हमारे साथ खड़ी रहेगी। हम भी विश्वास दिलाते हैं कि इस शक्ति के बूते हम 'बिगुल' को और अधिक धारदार बनाते जायेंगे। हम यह भी विश्वास दिलाते हैं कि बिगुल की आवर्तिता घटाकर कम से कम साप्ताहिक बनाने का संकल्प भी हमेशा हमारे जेहन में ताज़ा बना रहता है। 'बिगुल' नई समाजवादी क्रान्ति का एक हथियार है। इस हथियार को और अधिक धारदार बनाना हमारी साझा जिम्मेदारी है–'बिगुल' टीम की भी और पाठकों, शुभचिन्तकों और हमदर्दों की भी। हम आपसे अपील करते हैं कि :

–'बिगुल' को नियमित पत्र लिखते रहें। अपने कारखाने और औद्योगिक क्षेत्रों के हालात के बारे में लेख व टिप्पणियाँ भी भेजें। भाषा की अनगढ़ता या कच्चेपन की परवाह किये बिना बेहिचक लिखें। 'बिगुल' आपका दोस्त है, फिर कैसी हिचक? दिल की हर गिरह खोलकर लिखिये।

–विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों की मज़दूर बस्तियों में 'बिगुल' अध्ययन-मण्डल गठित कीजिए और अलग-अलग अंकों में प्रकाशित महत्त्वपूर्ण लखों पर सामूहिक चर्चाओं के सत्र आयोजित कीजिए।

–'बिगुल' के स्थायी कोष के लिए अधिकतम सम्भव आर्थिक सहयोग एकत्र करके भेजिए। आर्थिक संकटों से 'बिगुल' की आवाज़ कभी न बन्द होने पाये, यह हमारा साझा संकल्प है।

–जिन पाठक साथियों की सदस्यता समाप्त हो गयी है वे जितनी जल्दी सम्भव हो नवीनीकरण ज़रूर करा लें।

–सम्पादक मण्डल

''मज़दूरों का अखबार मज़दूरों से एकत्र किये गये चन्दे से ही निकलना चाहिए।''
–व्ला. इ. लेनिन

नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक

बिगुल

एक अंक का मूल्य : रु. 3.00
वार्षिक : रु. 40.00
(डाक व्यय सहित)

मालिक, पुलिस, कानून, अफ़सर, दलालों और गुण्डों के जाल में उलझे मज़दूर

बिगुल संवाददाता

नोएडा। ए-68 सेक्टर 63 स्थित बी.एल.इंटरनेशनल एक ''नामी'' गारमेन्ट एक्सपोर्ट कंपनी है। ''नामी'' इसलिए कि कंपनी मज़दूरों को मारने-पीटने, श्रम कानूनों की धाज्जियां उड़ाने और पुलिस, साहब, सरकार लोगों को अपनी जेब में रखकर खुली गुण्डागर्दी करने के लिए कुख्यात है।

अप्रैल माह की 20 तारीख की शाम भी ऐसा ही हुआ। कंपनी ने करीब चालीस मज़दूरों को अगले दिन से काम पर आने से मना कर दिया। कारण पूछने पर कहा गया कि-''अब आप लोगों की जरूरत नहीं रही!''।

मज़दूरों का कहना था कि वे काम करना चाहते हैं। हालांकि काम के हालात बेहद बुरे हैं। कंपनी उन्हें कोई ईएसआई, पी.एफ., न्यूनतम मज़दूरी, ओवरटाइम, पेस्लिप, साप्ताहिक छुट्टी आदि जैसे कानूनी अधिकार तक नहीं दे रही है। और तो और कंपनी में टायलेट पास भी चलाया जाता है। मज़दूर कंपनी के भीतर अपना मोबाइल नहीं ले जा सकते। अगर कहीं उनके परिवार वालों के साथ कोई दुर्घटना हो जाये तो मज़दूरों को तभी खबर लगेगी जब वो रात बीते अपने-अपने दड़बों में लौटेंगे। बात साफ है–मज़दूरों का कितना भी नुकसान क्यों न हो,मालिकों का नुकसान नहीं होना चाहिए।

निकाले गये मज़दूरों ने संगठित प्रयास से मालिकों के खिलाफ लड़ने का मन बना लिया। लेकिन उनके सामने कोई रास्ता नहीं था। उन्हें लगा कि वकील की मदद से वो कंपनी के खिलाफ कानूनी कार्रवाई करेंगे। उन्होंने रजफ खान नाम के एक आदमी को अपना वकील नियुक्त किया। दो दिन बीतते-बीतते मज़दूरों ने देखा कि उनका वकील कंपनी का पक्ष लेने लगा है। मज़दूरों ने किसी तरह उससे पीछा छुड़ाया और स्वयं ही डी.एल.सी. जाने की ठानी। मज़दूरों के पास धमकी भरे फोन आने लगे। बाद में पता लगा कि यह काम वकील और एक लेबर इंस्पेक्टर (जयसिंह) कर रहे थे। और सबसे चौंकाने वाली बात यह थी कि अपने आपको वकील बताने वाला शख्स एक दलाल था। बी.एल. के एक पुराने मज़दूर ने बताया कि ठेकेदार द्वारा मारपीट किये जाने पर जब वो पुलिस में रिपोर्ट लिखाने गये तो पुलिस ने रिपोर्ट नहीं लिखी और कहा-''भाई तुम लोग बेवकूफ हो! हमारे पास क्यों आये? अरे हम लोग तुम्हारी नहीं बड़े लोगों की सेवा करने के लिए बने हैं।''

बी.एल. के पीड़ित मज़दूर अब समझने लगे हैं कि वे एक अदृश्य जाल में फंसे हुए हैं। मालिक लोग पुलिस, कानून, अफसर, चुनावी नेता, दलालों और गुण्डों की मदद से इस जाल को और मजबूत करते जा रहे हैं। जब तक सभी मज़दूर इस जाल से आजाद होने की कोशिश नहीं करेंगे तब तक तो जीवन यूं ही पिसता जाएगा।

एपेक्स सिक्यूरिटीज़ एण्ड डिटेक्टिव फोर्स कम्पनी की घटना

पगार माँगी तो गार्ड को उठाकर नीचे फेंक दिया

बिगुल संवाददाता

हर सरकारी एवं निजी औगोगिक प्रतिष्ठानों, दफ्तरों एवं साहब लोगों के घरों के बाहर वर्दी पहने सिक्यूरिटी गार्डों का रोबदाब देखकर एकबारगी तो कोई भी आम आदमी सहम जाता है। लेकिन अगर आप इनकी ज़िन्दगी की असल तस्वीर देखेंगे तो आप इनके प्रति हमदर्दी से भर उठेंगे।

जी हाँ! गार्ड्स भी मेहनतकश वर्ग के हिस्से हैं। इनके क़रीब जाने पर आपको पता चलेगा कि ये ठेका प्रथा के अन्तर्गत सबसे बुरी स्थितियों में काम कर रहे हैं। मालिकों की सुरक्षा करने वाले इन सुरक्षाकर्मियों की खुद की ज़िन्दगी कितनी असुरक्षित है इसका ताजा उदाहरण है दिल्ली स्थित एपेक्स सिक्यूरिटीज एण्ड डिटेक्टिव फोर्स नाम की कम्पनी में घटी एक दर्दनाक घटना।

यह कम्पनी दिल्ली, नोएडा, गाजियाबाद, गुड़गाँव आदि इलाकों में विभिन्न प्राइवेट-सरकारी संस्थानों और रिहायशी कॉलोनियों आदि के लिए गार्ड्स सप्लाई करती है। पिछले 4 माह का बकाया वेतन माँगने के लिए जब 15-20 गार्ड्स कम्पनी के दिल्ली स्थित ऑफिस पहुँचे तो कम्पनी ने उन्हें कारोबार में हुये घाटे की दुहाई देते हुये 'कम्पनी की मदद' करने को कहा। पिछले 4 माह से मकान मालिक, राशन वाले और दूधिये के कर्जे से दबे मज़दूर कम्पनी की इस अपील पर सन्न रह गये। इस पर दलीप सिंह नाम के एक गार्ड ने गुहार लगाते हुये कहा कि, ''जब आप लोग हमें मारना ही चाहते हैं तो सीधे-सीधे हमें नीचे क्यों नहीं फेंक देते? इस पर अरुणेश मिश्रा नाम के ऐरिया मैनेजर ने तुरंत दलीप सिंह की इच्छा पूरी कर दी। उसे एक मंजिल ऊपर से नीचे फेंक दिया। दलीप सिंह के दोनों पाँव टूट गये। पुलिस में शिकायत तो की लेकिन यह रिपोर्ट लिखने तक एफ.आई.आर. दर्ज नहीं हुई थी।

दलीप ने बताया कि कम्पनी ने 70 से ज्यादा गार्ड्स को पिछले 4-5 माह से भुगतान नहीं किया है। कम्पनी अपने क्लाइंट से प्रति गार्ड जहाँ 8 से 10 हजार रुपये तक लेती है, वहीं गार्ड्स को केवल 2900 रुपये का भुगतान किया जाता है। उन्हें न तो ज्वाइनिंग लेटर मिलता है, न पेस्लिप, न कोई रजिस्टर मेन्टेन किया जाता है और ना हीं मस्टररोल। एम्प्लॉयमेन्ट कार्ड का तो सवाल ही नहीं उठता। ई.एस.आई. व पी.एफ. कटता है लेकिन जमा नहीं होता। साप्ताहिक छुट्टी तक नहीं मिलती। कम्पनी वर्दी के पैसे तनख्वाह से काटती है। गार्ड्स को ड्यूटी लेने के लिए फील्ड अफसर की मुट्ठी गरम करनी पड़ती है। इसके अलावा जूतों की पॉलिश, शेव, वर्दी आदि का बहाना बनाकर प्रत्येक महीने 50 से 200 रुपये तक काट लिये जाते हैं।

इस घटना से तमाम गार्ड्स कुछ समय के लिए तो आन्दोलन की मुद्रा में आ गये थे। लेकिन जल्द ही उनका सारा जोश समझौतापरस्ती की दलदल में धँस गया। मज़दूर आन्दोलन की पस्ती और ट्रेडयूनियनों की दलाली की राजनीति का प्रभाव इन गार्ड्स की मानसिकता पर साफ दिखाई देता है। वे अभी भी इस कल्पना में जी रहे हैं कि मालिकों से आरजू मिन्नत करके और कानूनी लड़ाई लड़कर अपना काम निकाल लेंगे। वो यह नहीं समझ पा रहे हैं कि उनका संघर्ष किसी एक एपेक्स मालिक से नहीं बल्कि पूरी ठेका व्यवस्था व पूँजी की सम्पूर्ण व्यवस्था के साथ है।

परिकल्पना प्रकाशन की नयी प्रस्तुतियाँ

चीनी उपन्यास
तरुणाई का तराना
लेखक : याङ मो
मूल्य : रु. 150.00

तीन टके का उपन्यास
लेखक : बेर्टोल्ट ब्रेष्ट
मूल्य : रु. 125.00

चुनी हुई कहानियाँ
खण्ड 3
लेखक : मक्सिम गार्की
मूल्य : रु. 75.00

"जनपक्षधर मीडियाकर्मियों पर बढ़ते हमले और प्रतिरोध" विषय पर गोष्ठी

संघर्षधर्मी मीडियाकर्मियों को संगठित होने का आह्वान

बिगुल संवाददाता

गोरखपुर, । लुधियाना में 'बिगुल' के संवाददाता राजविन्दर सिंह की एक फैक्ट्री मालिक द्वारा असामाजिक तत्वों से हमला करवाने और पुलिस से साँठ-गाँठ कर संगीन धाराओं के तहत गिरफ्तार कर जेल भिजवा देने की कार्रवाई के विरोध में पत्रकारों, बुद्धिजीवियों-लेखकों और विभिन्न जनसंगठनों ने एकजुट आवाज़ उठायी। स्थानीय प्रेस क्लब में विगत 30 अप्रैल को मज़दूर अखबार 'बिगुल' द्वारा अयोजित विचार गोष्ठी में देश के अलग-अलग हिस्सों में जनपक्षधर मीडियाकर्मियों पर सत्ता-तन्त्र, पूँजी और आपराधिक तन्त्र के गँठजोड़ द्वारा किये जा रहे हमलों पर गम्भीर चिन्ता व्यक्त की गयी और ऐसे हमलों के कारगर प्रतिरोध के लिए मीडियाकर्मियों को एकजुट होने का आह्वान किया गया। विचार गोष्ठी का विषय था–"जनपक्षधर मीडियाकर्मियों पर बढ़ते हमले और प्रतिरोध।"

विचार गोष्ठी की अध्यक्षता करते हुए वरिष्ठ पत्रकार श्री गिरिजेश राय ने कहा कि औद्योगिक क्षेत्रों में मज़दूरों के पक्ष की सच्चाइयाँ उजागर करना खास तौर पर जोखिमभरा है। 'बिगुल' जैसे छोटे अखबारों के संवाददाता जब जोखिम मोल लेकर फैक्ट्री मलिकान द्वारा मज़दूरों के उत्पीड़न की सच्चाइयाँ उजागर करते हैं तो उन पर पूँजीपति-पुलिस-गुण्डा गँठजोड़ से हमले करवाये जाते हैं। उन्होंने कहा कि ऐसे हमलों से संघर्षधर्मी पत्रकारों की आवाज़ को कुचला नहीं जा सकता।

वरिष्ठ कथाकार मदन मोहन ने कहा कि जनता की आवाज उठाने वाले पत्रकारों पर देश भर में हमले हो रहे हैं लेकिन पत्रकार संगठन चुप हैं। उन्होंने कहा कि जिस तरह सच्चा साहित्य आम जन की आकांक्षाओं को स्वर देता है उसी तरह सच्ची पत्रकारिता भी आम जन के शोषण-दमन की सच्चाइयों को उजागर करती है। उन्होंने साहित्य-संस्कृति और पत्रकारिता में सक्रिय सच्चे जनपक्षधर लोगों की व्यापक एकजुटता कायम करने पर बल दिया।

वरिष्ठ पत्रकार जगदीश लाल श्रीवास्तव ने कहा कि मुख्य धारा की मीडिया में आज आम जन और उसकी पीड़ा हाशिये पर चली गयी है। शासक वर्गीय विचारों-मूल्यों और संस्कृति का बोलबाला है। उन्होंने वैकल्पिक जन मीडिया के तन्त्र को मज़बूत बनाने की ज़रूरत को रेखांकित किया। सामाजिक कार्यकता डॉ असीम सत्यदेव ने कहा कि आज का मीडिया मुख्यत: साम्राज्यवादी वर्चस्व का वाहक बना हुआ है। पत्रकार मनोज सिंह ने कहा कि आज राज्य स्वयं पत्रकारों का सबसे बड़ा उत्पीड़क बन गया है। उन्होंने उत्तराखण्ड में प्रशान्त राही, केरल में गोविन्दन कुट्टी और छत्तीसगढ़ में प्रशान्त झा की बेबुनियाद आरोपों में गिरफ़्तारी का उल्लेख करते हुए कहा तकि तमाम राज्यों में ऐसे कानून बनाये जा रहे हैं जिनके शिकंजे में जनता की आवाज उठाने वाले पत्रकारों को दबोचा जा सकता है। पत्रकार अशोक चौधरी ने कहा कि जनपक्षधर पत्रकारों को जनान्दोलनों से जुड़ना चाहिए तभी उनपर हमलों का कारगर प्रतिरोध संगठित किया जा सकता है।

विचार गोष्ठी में अपने विचार व्यक्त करते हुए पी.यू.सी.एल. के जिला संयोजक फतेह बहादुर सिंह ने कहा कि लुधियाना में 'बिगुल' के संवाददाता पर हमला जनतांत्रिक एवं नागरिक अधिकारों पर खुला हमला है। उन्होंने कहा कि दिन-ब-दिन सत्ता, पूँजी और माफिया गँठजोड़ मजबूत होता जा रहा है। विचार गोष्ठी में जनवादी लेखक संघ के प्रमोद कुमार, दिशा छात्र संगठन के अपूर्व मालवीय और नौजवान भारत सभा के प्रमोद ने भी अपने विचार व्यक्त किये। गोष्ठी का संचालन 'बिगुल' के सम्पादकीय प्रतिनिधि अरविन्द सिंह ने किया।

गोष्ठी के अन्त में लुधियाना में 'बिगुल' के संवाददाता राजविन्दर सिंह की एक फैक्ट्री मालिक द्वारा असामाजिक तत्वों से हमला करवाने और पुलिस से साँठ-गाँठ कर संगीन धाराओं के तहत गिरफ्तार कर जेल भिजवा देने की कार्रवाई की कठोर भर्त्सना करते हुए एक विरोध प्रस्ताव पारित किया गया जिसे पंजाब के मुख्यमन्त्री को प्रेषित कर दिया गया।

पूँजीपति-पुलिस-गुण्डा गँठजोड़ का एक और हमला...

(पेज 1 से आगे)

पुलिसकर्मियों ने मिल कर उन्हें बुरी तरह से मारा-पीटा और प्रताड़ित किया। पुलिस ने नौजवान भारत सभा के दो कार्यकर्ताओं लखविन्दर सिंह और परमिन्दर सिंह और एक फैक्ट्री मज़दूर गौरीशंकर के खिलाफ भी इसी तरह के मामले दर्ज किये हैं। प्रत्यक्षदर्शियों के अनुसार गौरीशंकर घटनास्थल पर मौजूद लोगों को पानी पिलाने का काम कर रहा था। पुलिस ने इस प्राथमिकी में 25-30 अन्य अज्ञात लोगों को भी शामिल किया है, जिसका प्रयोग कई और कार्यकर्ताओं एवं मज़दूरों को प्रताड़ित करने के लिए किया जा सकता है।

श्री राजविन्दर को पुलिस ने दो दिन की पुलिस रिमांड पर लेकर पूछताछ के बहाने और भी प्रताड़ित किया। 24 अप्रैल को उन्हें 8 मई तक न्यायिक हिरासत में भेज दिया गया। इस समय वे लुधियाना जेल में हैं।

इस बीच पुलिस पूरी नंगई के साथ मालिक का साथ दे रही है। इतने भयंकर विस्फोट के बावजूद उस पर सिर्फ लापरवाही बरतने की धाराएं लगाई गई हैं और उसे गिरफ़्तार नहीं किया गया है। मज़दूरों को आर्तंकित करने के लिए पुलिस ने 22 अप्रैल की रात को पुनीत नगर और भरपूर नगर कालोनी में घरों में घुसकर महिलाओं और बच्चों सहित मज़दूरों की पिटाई की। पूरी बस्ती में पुलिस ने जबर्दस्त आंतकराज कायम कर रखा है। आज भी बस्ती के बाहर पुलिस तैनात है। पुलिस साफ तौर पर मिल मालिकों की एसोसिएशन के दबाव में मामले को रफ़ा-दफ़ा करने के लिए काम कर रही है। पूरे 40 घंटे बाद विस्फोट का मलबा लोगों की गैर-मौजूदगी में हटाया गया।

'बिगुल' संवाददाता पर पूँजीपति-पुलिस-गुण्डा गँठजोड़ के इस हमले की जानकारी जब क्षेत्र के 'बिगुल' पाठक मज़दूर साथियों को मिली तो उनके अन्दर ज़बर्दस्त आक्रोश फैल गया। अगले दिन मज़दूरों और सामाजिक कार्यकर्ताओं का एक प्रतिनिधिमण्डल जिले के एसएसपी आर के जैसवाल से घटना के बारे में विरोध दर्ज़ कराने पहुँचा लेकिन एसएसपी महोदय पूरी तरह फैक्ट्री मालिकान की भाषा बोलते हुए कहने लगे कि जो भी क़ानून हाथ में लेगा उसके ख़िलाफ़ कड़ी कार्रवाई की जायेगी। प्रतिनिधिमण्डल के यह कहने पर कि क़ानून तो फैक्ट्री मालिक,उसके गुण्डों ने हाथ में लिया है और पुलिस उनका साथ दे रही थी, एएसपी महोदय ने मामले को डीएसपी श्री परमजीत सिंह पन्नू के सुपुर्द कर अपना पल्ला झाड़ लिया। प्रतिनिधिमण्डल जब डीएसपी महोदय से मिला तो वह ठेठ पुलिसिया अन्दाज में पहले से गढ़ी गयी कहानी सुनाने लगे। कहने लगे कि मज़दूर हुजूम बनाकर हाथों में तलवारें, गँड़ासे और लाठियाँ लेकर फैक्ट्री के भीतर धावा बोलने जा रहे थे। यही कहानी एफआईआर में भी लिखी गयी है। मज़दूर प्रतिनिधियों ने जब पुलिस अधिकारियों का यह खुला मालिकपरस्त रवैया देखा तो उन्होंने पूरी तैयारी के साथ जिले के उपायुक्त कार्यालय पर विरोध प्रदर्शन करने का निर्णय लिया। क्षेत्र में सक्रिय कुछ अन्य मज़दूर और जनवादी एवं नागरिक अधिकार संगठनों के साथ संयुक्त बैठक के बाद 29 अप्रैल को उपायुक्त कार्यालय पर ज़ोरदार विरोध प्रदर्शन हुआ।

इस विरोध प्रदर्शन में लगभग 300-350 की तादाद में मज़दूर अपनी दिहाड़ी तोड़कर शामिल हुए। प्रदर्शन के बाद एडीसी को ज्ञापन सौंपा गया। प्रदर्शन के दौरान मज़दूरों की सभा को लाल झण्डा होज़री एण्ड टेक्सटाइल मज़दूर यूनियन के श्याम नारायण यादव, मोल्डर एण्ड स्टील यूनियन (महेन्द्र ग्रुप) के सेक्रेटरी महेन्द्र, मोल्डर एण्ड स्टील यूनियन (विजय नारायण ग्रुप) के सेक्रेटरी विजय नारायण, डेमोक्रेटिक इम्पलाइज़ यूनियन के रमनजीत सन्धू, डेमोक्रेटिक टीचर्स फ्रण्ट के जोगिन्दर आज़ाद, बिगुल मज़दूर दस्ता के सुखविन्दर, नौजवान भारत सभा के अजयपाल, इंक़लाबी केन्द्र के कँवलजीत खन्ना और लोक मोर्चा के कस्तूरी लाल ने सम्बोधित किया। सभी वक्ताओं ने लुधियाना के औद्योगिक क्षेत्रों में पूँजीपति-पुलिस-गुण्डा गँठजोड़ के हमलों के खिलाफ़ एकजुट संघर्ष का आह्वान किया।

'बिगुल' पर पूँजीपति-पुलिस और गुण्डा गँठजोड़ का यह हमला कोई आश्चर्यजनक घटना नहीं है। लुधियाना के औद्योगिक क्षेत्रों में आलम यह है कि कई फ़ैक्ट्रियों में मालिकान ने सिक्योरिटी के नाम पर असलहाधारी गुण्डों-अपराधियों की जमात भर्ती कर रखी है। चूँकि इन्हें पुलिस का भी खुला संरक्षण मिला हुआ है इसलिए इन्होंने बेखौफ़ होकर गुण्डाराज क़ायम कर रखा है। ऐसी ही एक फैक्ट्री बजाज संस में इन सिक्योरिटी वाले गुण्डों ने यूनियन के अध्यक्ष को तलवारों से काटकर मार डाला था। मूनलाइट नामक इलाके की एक फैक्ट्री में भी इसी तरह का आतंकराज क़ायम है। आये दिन ऐसे ख़ूनी कारनामे होते रहते हैं लेकिन मज़दूरों की व्यापक एकजुटता की कमी के कारण अक्सर मुद्दे दब जाते हैं। यह घटना भी दब जाती लेकिन नौजवान भारत सभा और बिगुल मज़दूर दस्ता की वक़्त पर पहलक़दमी के कारण ऐसा न हो सका।

'बिगुल' के ऊपर पूँजीपति-पुलिस और गुण्डा गँठजोड़ का यह पहला हमला नहीं है। वर्ष 2003 में नोएडा में भी इस गँठजोड़ ने ऐसा ही हमला किया था। आज भी नोएडा के अनेक फ़ैक्ट्री मालिकान बिगुल के संवाददाताओं को जान से मारने सहित तरह-तरह की धमकियाँ भिजवाते रहते हैं। दरअसल वे इस अहमकाना खामखयाली में जी रहे हैं कि ऐसी धमकियों और हमलों से बिगुल की मुहिम रुक जायेगी। उनकी बौखलाहट इस बात का प्रमाण है कि बिगुल सही दिशा में आगे बढ़ रहा है और अपने मक़सद को बखूबी अंजाम दे रहा है। ऐसे हमलों का मुक़ाबला करने के लिए हम हमेशा तैयार रहते हैं। हम जानते हैं कि बिगुल के पाठक, हमदर्द और शुभचिन्तक साथी हमारे साथ खड़े हैं। हमें यह पूरा विश्वास था कि अगर उनके बीच निरन्तर क्रान्तिकारी राजनीतिक प्रचार जारी रखा जाये और उनके रोज़मर्रा के संघर्षों में शिरकत करते रहा जाये तो उनके दिलों में जमी निराशा की बर्फ़ ज़रूर पिघलेगी और देश के औद्योगिक क्षेत्रों में फ़िलहाल आम तौर पर छायी मज़दूरों की चुप्पी ज़रूर टूटेगी। देश की पूँजीवादी व्यवस्था का संकट आने वाले दिनों में और गहरायेगा। इसके संकेत आज महसूस किये जा सकते हैं। एक देशव्यापी मज़दूर उभार जैसी स्थितियाँ देर-सवेर सामने आयेंगी ही। मज़दूर वर्ग के ऊपर पूँजीपति वर्ग और उसकी राज्य मशीनरी के खुले हमले इन स्थितियों को क़रीबतर लाते जायेंगे।

राजविन्दर फ़िलहाल जेल में बन्द हैं और नौभास कार्यकर्ताओं लखविन्दर व परमिन्दर सहित मज़दूर साथी गौरीशंकर की गिरफ़्तारी के लिए पुलिस लगातार छापामारी कर रही है। स्थानीय न्यायालय में उनकी ज़मानत की अर्ज़ी पर भी विचार नहीं किया जा रहा है। अब तक तीन तारीख़ें पड़ चुकी हैं। हम सभी जानते हैं कि न्यायपालिका में आम तौर पर मौजूद वर्गीय पूर्वाग्रहों के साथ ही स्थानीय न्यायालयों में अनेकानेक तरीकों से किस तरह फ़ैसलों को प्रभावित किया जाता है। फिर भी इस क़ानूनी संघर्ष में जो भी अधिकतम किया जा सकता है उसमें कोताही भी नहीं बरती जानी चाहिए। हम सभी इंसाफपसंद पत्रकारों, बुद्धिजीवियों, नागरिक अधिकार कर्मियों, सामाजिक कार्यकर्ताओं से अपील कर रहे हैं कि राजविन्दर को तत्काल रिहा करने तथा उन पर से फर्जी मुकदमे हटाने के लिए पंजाब के मुख्यमन्त्री और राज्यपाल के नाम विरोधपत्र भेजें। विरोध पत्र की प्रतियाँ और विरोध कार्रवाइयों की सूचना बिगुल कार्यालय पर भी ज़रूर भेजें। लुधियाना के पुलिस और प्रशासनिक अधिकारियों के फोन तथा फैक्स नंबर नीचे दिए जा रहे हैं :

–प्रकाश सिंह बादल
मुख्यमन्त्री, पंजाब
फैक्स : 0172-2741821
–*राज्यपाल* : 0172-2741058
–*गृहसचिव, पंजाब* :
0172-2740811, एक्स. 4730
ईमेल : pshaj@punjabmail.gov.in
–*एसएसपी, लुधियाना*, आर.के. जैसवाल - 09815800402,
0161-2406055
–डी.सी. (जिलाधिकारी) लुधियाना : 0161-2403100
फैक्स : 0161-2404502
–एसपी सिटी (श्री चीमा)
09814457579

अगर हम नहीं लड़ते
अगर हम लड़ते नहीं जाते
तो दुश्मन
अपनी संगीनों से हमें खत्म कर डालेगा
और फिर
हमारी हमारी हड्डियों की ओर इशारा करते
हुए कहेगा
देखो :
ये गुलामों की हड्डियाँ हैं
गुलामों की।

–अज्ञात

'बिगुल' पर हमले के विरोध में देश के अलग-अलग हिस्सों से उठीं आवाज़ें

दिल्ली

'बिगुल' के लुधियाना संवाददाता एवं अनेक मज़दूरों को पुलिस द्वारा झूठे मुकदमे में फँसाने, थाने में पिटाई करने तथा दो अन्य सामाजिक कार्यकर्ताओं के विरुद्ध कई फर्जी मुकदमे दायर करने के विरोध में सामाजिक संगठनों सहित मज़दूरों, बुद्धिजीवियों, पत्रकारों और दिल्ली विश्वविद्यालय के छात्र-छात्राओं ने 24 अप्रैल को पंजाब भवन के सामने ज़ोरदार प्रदर्शन किया।

'भगत सिंह को याद करेंगे, जुल्म नहीं बर्दाश्त करेंगे,' 'पंजाब पुलिस, होश में आओ', 'राजविन्दर को रिहा करो', पूँजीपति-पुलिस गँठजोड़ मुर्दाबाद' जैसे नारों से पंजाब भवन और कोपरनिकस मार्ग का पूरा इलाका गूँज उठा।

दिल्ली में पंजाब भवन के सामने प्रदर्शन करते विभिन्न संगठनों के कार्यकर्ता

जागरूक नागरिक मंच की तरफ से पत्रकार और सामाजिक कार्यकर्ता सत्यम ने पूरे घटनाक्रम की जानकारी दी और राजविंदर को रिहा करने, उनके खिलाफ फर्जी मुकदमे वापिस करने आदि की माँगें माने जाने तक इस विरोध को जारी रखने का ऐलान किया। उन्होंने बताया कि राजविंदर सहित अन्य मज़दूरों को फर्जी मामलों में फंसाने और फैक्ट्री मालिक और पुलिस द्वारा थाने में राजविंदर की पिटाई करने के खिलाफ छत्तीसगढ, पंजाब और उत्तर प्रदेश में भी विरोध हो रहा है। सत्यम ने कहा कि केवल पंजाब ही नहीं, बल्कि अन्य राज्यों में पत्रकारों-सामाजिक कार्यकर्ताओं को इस तरह के फर्जी मुकदमों में लगातार फंसाया जा रहा है। विशेष तौर पर, 'बिगुल' द्वारा फैक्ट्री मालिकों का भण्डाफोड़ करने वाली लगातार हो रही रिपोर्टिंग से पूंजीपति बौखलाए हुए हैं। पहले नोएडा और पंजाब में बिगुल के संवाददाता के खिलाफ इस तरह मामले बनाए गए और अन्य स्थानों पर फैक्ट्री मालिक और उनके गुण्डे ही नहीं पुलिस भी बिगुल के पत्रकारों को लगातार धमकियां देती रहती है।

दिशा छात्र संगठन के अभिनव ने कहा कि मज़दूरों और आम जनता के पक्ष में आवाज उठाने वाले पत्रकारों और सामाजिक कार्यकर्ताओं के पुलिसिया दमन के खिलाफ आवाज बुलंद करने में छात्र-छात्राएं भी पीछे नहीं रहेंगे। अगर राजविन्दर को रिहा नहीं किया गया तो इस मुद्दे को लोगों के बीच ले जाकर आन्दोलन तेज किया जायेगा।

नौजवान भारत सभा के तपीश ने कहा कि पूंजीपति-नेता-पुलिस गठजोड़ मज़दूरों के खिलाफ खुली गुंडागर्दी पर उतर आया है। मज़दूरों को भी अब इस नंगी सच्चाई को ठीक से समझ लेना चाहिए। यह इस तरह की अकेली घटना नहीं है। जहाँ भी मज़दूर अपनी अपनी माँगों को लेकर सक्रिय है वहाँ यह गठजोड़ उनकी और उनके पक्ष में आने वाले पत्रकारों-सामाजिक कायकर्ताओं की आवाज़ दबाने की हरचंद कोशिश कर रहा है।

बिगुल मज़दूर दस्ता के जनार्दन ने कहा कि फैक्ट्री मालिक जगह-जगह बिगुल और इसके कार्यकर्ताओं को निशाना बना रहे हैं, क्योंकि यह मज़दूरों के हक की बात करने वाला और उनके आन्दोलनों का पुरजोर समर्थन करने वाला मज़दूरों का अपना अखबार है।

नारी सभा की मीनाक्षी ने कहा कि पुलिस एकदम बेशर्मी के साथ मालिकों के गुण्डा गिरोह भूमिका अदा कर रही है।

इन भाषणों और गगनभेदी नारों से पंजाब भवन के अन्दर खलबली मची हुई थी। आखिरकार अधिकारियों ने खुद आकर प्रतिनिधिमण्डल को आमंन्त्रित किया। एक प्रतिनिधिमण्डल ने सभी संगठनों की ओर से पंजाब के मुख्यमन्त्री के नाम ज्ञापन दिया। ज्ञापन में राजविन्दर और सभी बेकसूर मज़दूरों को तत्काल रिहा करने, लखविन्दर और परमिन्दर के विरुद्ध फर्जी मुकदमे वापस लेने, दोषी कारखाना मालिक को गिरफ्तार करने, मामले की उच्च स्तरीय जांच कराने तथा दोषी पुलिस अधिकारियों के विरुद्ध कड़ी कार्रवाई करने की मांग की गयी।

लखनऊ

उ.प्र. की राजधानी लखनऊ में भी 'बिगुल' पर हमले के खिलाफ पत्रकारों, लेखकों और सामाजिक कार्यकर्ताओं ने आक्रोश व्यक्त किया और पंजाब के मुख्यमन्त्री सहित अन्य सम्बन्धित अधिकारियों के पास विरोध पत्र भेजे। विरोध करने वाले प्रमुख लोगों में लखनऊ विश्वविद्यालय की पूर्व कुलपति प्रो0 रूपरेखा वर्मा, अनुराग ट्रस्ट की अध्यक्ष कमला पाण्डेय, प्रख्यात साहित्यकार रवीन्द्र वर्मा, शकील सिद्दीकी, 'तद्भव' के सम्पादक अखिलेश, 'इप्टा' (उ0प्र0) के महामन्त्री राकेश, भारतीय महिला फेडरेशन (उ.प्र.) की सचिव आशा मिश्रा, 'साझी दुनिया' की मीना काला, एच. ए. एल. इम्प्लाइज़ एसोसिएशन के अध्यक्ष के. सी. मीणा, महामन्त्री उपेन्द्र कौल, उपाध्यक्ष वकील सिंह, प्रचार मन्त्री रामनरेश शर्मा, वी.वी.गिरि विकास अध्ययन संस्थान के प्रो. डी.एस. दिवाकर, उ. प्र. प्रभागीय लेखाकार संघ के उपाध्यक्ष पी.के. अवस्थी, सदस्य जी.पी. भट्ट, पायनियर अरबन कोआपरेटिव बैंक के चेयरमैन एम. ए. खान, विज्ञान फाउण्डेशन के संदीप खरे , भारत ज्ञान-विज्ञान समिति के विनोद, दैनिक 'हिन्दुस्तान' के पत्रकार नागेन्द्र, जगदीश जोशी, सन्तोष वाल्मीकि, विधि सिंह, आलोक पकड़ाकर, नीलामणि लाल, कार्टूनिस्ट रामबाबू, आंचलिक विज्ञान केन्द्र के कलाकार रामकरण, चित्रकार शशिभाल सिंह और दशरथ, लेखाधिकारी जाँच समिति (प्रथम) उ. प्र. पावर कारपोरेशन लि. के मेवालाल और सुरेन्द्र कुमार, ऑल इडिया पीपुल्स लायर्स एसोसियेशन के अध्यक्ष सी. बी. सिंह, मार्क्सवादी जन साहित्य केन्द्र के बाबूराव बोरकर, लेनिन पुस्तक केन्द्र के गंगा प्रसाद, अवध बार एसोसियेशन के अनिल सिंह और अधिवक्तागण राजेन्द्र पाण्डेय, राम कुमार वर्मा, दिवाकर सिंह, पी. के. त्रिपाठी, दिलीप मिश्र, कुलदीप कुलश्रेष्ठ, हरिलाल गुप्त, पीयूष कुमार, डी. के. श्रीवास्तव, आर. के. सिंह, अवधेश यादव, अनुराग मिश्र, विश्वास शुक्ल, प्रदीप पाण्डेय, एस.के.त्रिपाठी, आर.एन. यादव, एन.पी.वर्मा, नरेश प्रकाश कुशवाहा आदि प्रमुख रूप से शामिल हैं।

इलाहाबाद

इलाहाबाद में भी लेखकों, बुद्धिजीवियों, अधिवक्ताओं , पत्रकारों और सामाजिक कार्यकताओं ने पंजाब के मुख्यमन्त्री, मुख्य सचिव और सम्बन्धित अधिकारियों को ई-मेल और फैक्स भेजकर अपना विरोध दर्ज़ कराया। विरोध दर्ज कराने वालों में प्रमुख रूप से कवि नीलाभ, कथाकर शेखर जोशी और डॉ. दूधनाथ सिंह, वरिष्ठ रंगकर्मी अजित पुष्कल, प्रवीण शेखर और अनिल भौमिक, हाईकोर्ट बार एसोसिएशन के अध्यक्ष सी. एल. पाण्डेय, ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क के के. के. राय, इलाहाबाद विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग के प्रो. योगेश्वर तिवारी, हिन्दी विभाग के प्रो. राजेन्द्र कुमार, राष्ट्रीय जनवादी पार्टी के अध्यक्ष व पूर्व आई.ए.एस. अधिकारी हरिश्चन्द्र, खेत मज़दूर सभा के डॉ. आशीष मित्तल, इलाहाबाद न्यूज़ रिपोर्टर्स क्लब के सचिव देवेन्द्र प्रताप सिंह और सदस्य रतन दीक्षित, गवर्नमेण्ट प्रेस यूनियन के अध्यक्ष अजय भारतीय, भा.क.पा. के वरिष्ठ कार्यकर्ता जियाउल हक़, 'उज्जवल ध्रुवतारा' के सम्पादक जी.पी. मिश्रा और वरिष्ठ अधिवक्ता के. पी. अग्रवाल एवं राजेन्द्र पाण्डेय शामिल हैं।

गोरखपुर

यहाँ लेखकों, पत्रकारों और सामाजिक कार्यकर्ताओं ने दो अलग-अलग गोष्ठियों में विरोध प्रस्ताव पारित किये। विरोध प्रस्ताव पर हस्ताक्षर करने वाले प्रमुख लोगों में वरिष्ठ पत्रकार गिरिजेश राय, दिनेश चन्द्र श्रीवास्तव, 'अमर उजाला' के जगदीश लाल श्रीवास्तव और कोमल, दैनिक 'हिन्दुस्तान' के मनोज कुमार सिंह, 'दैनिक जागरण' के अशोक चौधरी, वरिष्ठ कथाकार मदनमोहन, गोरखपुर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के उपाचार्य डॉ0 अनिल राय, जनवादी लेखक संघ के प्रमोद कुमार, पीयूसीएल के जिला संयोजक फतेह बहादुर सिंह, वरिष्ठ चिकित्सक डॉ0 अजीज अहमद, डॉ. गिरिराज शरण, एडवोकेड हसन रज़ा रिजवी, जागरूक जनवादी मंच के डॉ. असीम सत्यदेव, शिक्षक व नाटककार राजाराम चौधरी, लोक विज्ञान मंच के संयोजक शिवनन्दन सहाय, 'अक्षरा' स्टेशनर्स के स्वदेश कुमार, परिवर्तन कामी छात्र संगठन के विश्वविद्यालय इकाई के संयोजक चक्रपाणि ओझा, भाकपा(मा. ले.) की राज्य स्थायी समिति के सदस्य यशवन्त सिंह, अखिल भारतीय खेत मज़दूर सभा के प्रदेश उपाध्यक्ष राजेश साहनी, पीपुल्स यूनियन फॉर ह्यूमन राइट्स के मण्डलीय अध्यक्ष चतुरानन ओझा, इंकलाबी नौजवान सभा के जिला अध्यक्ष शिवभोले साहनी और सचिव बजरंगी लाल निषाद, जनमुक्ति मोर्चा के गोरखपुर-बस्ती मण्डल के संयोजक ओम प्रकाश मिश्र, 'आइसा' के विश्वविद्यालय इकाई के संयोजक नदीम अहमद, श्रमिक सॉलिडरिटी फोरम के आर. के. सिंह, क्रान्तिकारी छात्र युवा मंच के केसरी नन्दन और राजेश, अखिल भारतीय प्रगतिशील महिला एसोसियेशन की कॉ. जगदम्बा आदि प्रमुख रूप से शामिल हैं।

छत्तीसगढ़

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा ने रायपुर, दल्ली, भिलाई आदि स्थानों पर अपनी सभाओं में मज़दूरों को इस घटना की जानकारी देते हुए इसका कड़ा विरोध किया। मोर्चा के नेताओं जनकलाल ठाकुर, गणेशीराम चौधरी, शेख अंसार आदि ने पंजाब सरकार को सीधे फैक्स भेजकर विरोध जताया और छत्तीसगढ़ सरकार के माध्यम से भी ज्ञापन भेजकर राजविन्दर को तत्काल रिहा करने की माँग की।

ठेका प्रथा के खिलाफ सफाईकर्मियों का जुझारू संघर्ष

(पेज 16 से आगे)

भूख हड़ताल के पाँचवे दिन नगर मजिस्ट्रेट महोदय सी.ओ. कैण्ट और पुलिस के दल-बल के साथ फिर पधारे और अनशनकारियों की डॉक्टरी रिपोर्ट का हवाला देकर उन्हें अस्पताल ले जाने के लिए दबाव बनाने लगे। लेकिन आन्दोलनकारी स्थानीय प्रशासन की सिफारिशी चिट्ठी मिलने तक भूख हड़ताल तोड़ने के लिए किसी भी कीमत पर तैयार नहीं हुए और उन्होंने प्रशासन पर दबाव बढ़ा देने के लिए छह और आन्दोलनकारियों को अनिश्चितकालीन भूख हड़ताल पर बिठा दिया। चार सफाईकर्मियों के साथ नौजवान भारत सभा के संयोजक अरविन्द सिंह और भाकपा (माले) के जिला प्रभारी राजेश साहनी भी उसी समय भूख हड़ताल पर बैठ गये। सफाईकर्मियों में महबूब अली और रफ़ीक के साथ दो महिला सफाईकर्मी राधेपति और गुड़िया भी शामिल थीं। आन्दोलनकारियों के उग्र तेवर को भाँपते हुए सिटी मजिस्ट्रेट महोदय को पीछे हटना पड़ा और वे वहाँ से दल-बल के साथ वापस लौट गये। तकरीबन आधे घण्टे बाद वे पुन: वापस लौटे। अब उन्होंने यह बताया कि उनकी जिलाधिकारी और मण्डलायुक्त महोदय से फोन पर बातचीत हुई है और कल दोपहर तक वे जिला प्रशासन की चिट्ठी लाकर सौंप देंगे। इस आधार पर उन्होंने पहले से भूख हड़ताल पर बैठे लोगों को अस्पताल ले जाने में सहयोग करने की बात कही। जब आन्दोलनकारी अड़े रहे तो उन्होंने पुलिस के जरिये पाँच भूख हडतालियों को उठवाकर जिला अस्पताल भिजवा दिया। आश्वासन के बाद भी जब नगर मजिस्ट्रेट महोदय अगले दिन दोपहर तक प्रशासन की चिट्ठी लेकर हाज़िर नहीं हुए तो आन्दोलनकारियों ने शहर में झाड़ू-बेलचा और ढोल-तासे के साथ जुलूस निकाला और नगर निगम कार्यालय पर उग्र प्रदर्शन किया। प्रदर्शनकारी अपने साथ नगर आयुक्त महोदय को भेंट करने के लिए कूड़े-कचरे से भरा एक 'गिफ्ट पैकेट' भी लेकर गये थे। कर्यालय में उनके मौजूद न रहने पर उन्होंने 'गिफ्टपैकेट' को कार्यालय के सामने छोड़ दिया।

इस जुझारू प्रदर्शन से आन्दोलनकारियों ने नगर निगम एवं जिला प्रशासन को यह सन्देश दे दिया कि छल-बल और दमन के हथकण्डों से आन्दोलन को दबाया नहीं जा सकता। प्रशासन को आखिरकार झुकना पड़ा।

(पेज 14 पर जारी)

नेपाल का कम्युनिस्ट आन्दोलन : एक संक्षिप्त इतिहास

(पहली किस्त)

● आलोक रंजन

नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना 22 अप्रैल, 1949 को, निरंकुश दमनकारी राणाशाही के विरुद्ध व्यापक जनसंघर्षों के दौरान हुई।

दूसरे विश्वयुद्ध के बाद पूरी दुनिया में राष्ट्रीय मुक्ति संघर्षों की लहर तूफ़ानी गति से आगे बढ़ रही थी। दुनिया के अधिकांश उपनिवेशों-अर्द्धउपनिवेशों-नवउपनिवेशों में संघर्षरत मुक्ति-योद्धाओं की अग्रणी क़तारों में कम्युनिस्ट शामिल थे। फ़ासीवाद को परास्त करने में समाजवादी सोवियत संघ की प्रमुख भूमिका और बेमिसाल क़ुर्बानियों ने पूरी दुनिया की मुक्तिकामी जनता के बीच समाजवाद की व्यापक स्वीकार्यता स्थापित कर दी थी। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद समूचे पूर्वी यूरोप और पूर्वी जर्मनी में सर्वहारा वर्ग की अगुवाई में लोक जनवादी सत्ताएँ स्थापित हो चुकी थीं। चीनी नवजनवादी क्रान्ति की विजय आसन्न थी। वियतनाम, कोरिया, आदि देशों में कम्युनिस्ट नेतृत्व में राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष तेज़ी से विजय की दिशा में आगे बढ़ रहे थे। भारत में कम्युनिस्ट पार्टी अपनी विचारधारात्मक कमज़ोरियों और भटकावों के कारण और ठोस परिस्थितियों के सटीक आकलन के अभाव में राष्ट्रीय आन्दोलन का नेतृत्व अपने हाथ में लेने में विफल रही थी, लेकिन 1947 के बाद तेभागा-तेलंगाना और पुनप्रा वायलार में कम्युनिस्ट नेतृत्व में किसान संघर्ष और मज़दूरों के व्यापक आन्दोलन जारी थे। रैडिकल मध्यवर्गीय शिक्षित नौजवानों का बड़ा हिस्सा उस समय कम्युनिस्ट विचारधारा के प्रभाव में था।

ने.क.पा. की स्थापना और प्रारम्भिक दौर : एक क्रान्तिकारी शुरुआत और फिर संशोधनवादी विचलन

यह पूरा विश्व परिवेश और पड़ोसी देश भारत की राजनीतिक सरगर्मियाँ नेपाल के शिक्षित मध्यवर्गीय युवाओं की एक छोटी-सी रैडिकल आबादी को गहराई से प्रभावित कर रही थीं। निरंकुश सामन्ती राणाशाही के विरुद्ध संघर्ष में सक्रिय ऐसे ही कुछ युवाओं ने एक मार्क्सवादी अध्ययन-मण्डल संगठित किया। इनमें पुष्पलाल श्रेष्ठ, नरबहादुर कर्माचार्य, निरंजन गोविन्द वैद्य, और नारायण विलास जोशी की अग्रणी भूमिका थी। पार्टी के संस्थापकों में एक अन्य प्रमुख नाम मनमोहन अधिकारी का था जो 1938 में अध्ययन के लिए वाराणसी आये थे। वहाँ उन्होंने 'भारत छोड़ो आन्दोलन' (1942) में भाग लिया और जेल भी गये। इसके बाद मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित होकर वे भारत की कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल हो गये। नेपाल लौटने के बाद वे विराट नगर में ट्रेड यूनियन नेता के रूप में सक्रिय थे। 1949 में नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना में उन्होंने भी हिस्सा लिया।

स्थापना के समय, एक पैम्फ़लेट के रूप में वितरित अपनी पहली अपील में नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी ने नवजनवाद की आवश्यकता पर बल देते हुए उसके लिए सशस्त्र संघर्ष को अनिवार्य बताया तथा नवजनवादी क्रान्ति में कम्युनिस्ट पार्टी की नेतृत्वकारी भूमिका पर बल दिया। इसके बाद सितम्बर, 1949 में पार्टी का पहला घोषणापत्र प्रकाशित हुआ। घोषणापत्र में यह स्पष्ट उल्लेख किया गया था कि "वर्तमान सामन्ती व्यवस्था और नेपाल पर साम्राज्यवादी-पूँजीवादी प्रभुत्व को उखाड़ फेंकने के लिए मज़दूर वर्ग के नेतृत्व में मेहनतकश जनसमुदाय के जनवादी राज्य का निर्माण करना" नेपाली जनता की मुक्ति का रास्ता है। घोषणापत्र में कहा गया था कि सामन्ती व्यवस्था के विरुद्ध समझौताहीन संघर्ष करके ही नेपाली जनता मुक्ति हासिल कर सकती है और केवल कम्युनिस्ट पार्टी ही ऐसी क्रान्ति का नेतृत्व कर सकती है, इसलिए नेपाल की जनता को कम्युनिस्ट पार्टी के झण्डे तले लामबन्द हो जाना चाहिए। अपनी पहली अपील और पहले घोषणापत्र में ही पार्टी ने यह स्पष्ट कर दिया था कि साम्राज्यवाद और उसके पिछलग्गू नेपाली बुर्जुआ वर्ग के एजेण्ट क्रान्ति को गुमराह करने की भरपूर कोशिश करेंगे। उनका इशारा नेपाली कांग्रेस के नेताओं की ओर था। नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी ने राणाशाही-विरोधी संघर्ष में जमकर हिस्सा लिया, लेकिन संघर्ष का नेतृत्व नेपाली कांग्रेस के हाथों में होने के कारण यह क्रान्तिकारी दिशा में आगे नहीं बढ़ सका। 1951 के "दिल्ली समझौते" के बाद, राणाशाही को समाप्त करके राजा त्रिभुवन के शासन के अन्तर्गत बहुदलीय जनतन्त्र क़ायम हुआ, लेकिन इससे नेपाली समाज के बुनियादी आर्थिक-सामाजिक ढाँचे में कोई बदलाव नहीं आया। साम्राज्यवाद के अतिरिक्त भारतीय विस्तारवाद का प्रभाव (जिसका स्पष्ट प्रमाण नितान्त असमान शर्तों वाली 1950 की भारत-नेपाल सन्धि है और बाद में तो कई और ऐसी सन्धियाँ हुईं, साथ ही नेपाल पर थोपी गयी ब्रिटिशकालीन सन्धियों का भी अस्तित्व बना रहा) भी बना रहा और गाँवों में सामन्ती उत्पीड़न भी यथावत् जारी रहा। निरंकुश दमनकारी राणाशाही का अन्त और बहुदलीय जनतन्त्र की स्थापना एक अतिसीमित बुर्जुआ सुधार मात्र था, जिसका मूल लक्ष्य था नेपाली जनता की क्रान्तिकारी आकांक्षाओं पर ठण्डे पानी के छींटे मारना और क्रान्तिकारी संघर्ष के विकास की सम्भावनाओं को समाप्त कर देना। नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी ने "दिल्ली समझौते" को जनता के साथ धोखाधड़ी की संज्ञा दी। पार्टी का मानना था कि वास्तविक जनवाद शासक वर्ग द्वारा ऊपर से थोपा गया नहीं हो सकता बल्कि आम जनता की ताक़त, पहलक़दमी और फ़ैसले से ही स्थापित हो सकता है। उल्लेखनीय है कि वास्तविक जनवादी गणराज्य की स्थापना के लिए सार्विक मताधिकार के आधार पर संविधान सभा के चुनाव का रणनीतिक (स्ट्रैटेजिक) नारा नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी ने सबसे पहले 1950 में दिया था।

1951 में पार्टी का पहला कन्वेंशन हुआ जिसमें 'नवजनवाद के लिए नेपाली जनता का रास्ता' नामक दस्तावेज़ पारित किया गया। पार्टी के पहले महासचिव पुष्पलाल श्रेष्ठ चुने गये। इस दस्तावेज़ में सशस्त्र संघर्ष की अपरिहार्यता पर बल दिया गया था। कहा जा सकता है कि कई विचारधारात्मक-राजनीतिक प्रश्नों पर स्पष्टता के अभाव और अनुभवहीनता के बावजूद अपने प्रारम्भिक वर्षों में नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी क्रान्तिकारी दिशा में आगे बढ़ रही थी। इसके परिणामस्वरूप इसमें लगातार क्रान्तिकारी कार्यकर्ताओं की भरती हो रही थी, जनसंगठनों का विकास हो रहा था और इसके नेतृत्व में कई किसान संघर्ष और जनसंघर्ष आगे बढ़ रहे थे। कुछ एक वर्षों के भीतर ही पार्टी की राजनीतिक-सांगठनिक भूमिका राष्ट्रीय राजनीति में अहम हो गयी थी।

इसी बीच, 1951 में बहुदलीय संसदीय प्रणाली लागू हुई और कम्युनिस्ट पार्टी पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। अब पार्टी के सामने एक ओर तो यह चुनौती थी कि वह अपनी विचारधारात्मक राजनीतिक अवस्थिति पर अडिग रहते हुए अपने ऊपर प्रतिबन्ध के विरुद्ध संघर्ष करे, दूसरी ओर, प्रतिबन्ध जारी रहने की स्थिति में अपने क्रान्तिकारी चरित्र को बनाये रखने के लिए उसे भूमिगत रहकर काम करने के लिए भी तैयार होना था। लेकिन पार्टी का अपरिपक्व, ग़ैर-सर्वहारा नेतृत्व इन दोनों चुनौतियों का सही ढंग से सामना नहीं कर सका। नतीजतन पार्टी में संविधानवादी, संसदवादी, सुधारवादी प्रवृत्तियों ने सिर उठाना शुरू किया। 1953 में, प्रतिबन्ध की परिस्थितियों में ही पार्टी की पहली कांग्रेस हुई। कांग्रेस ने नयी केन्द्रीय कमेटी का चुनाव किया जिसके महासचिव मनमोहन अधिकारी चुने गये। 1953 में ही नेपाली कम्युनिस्ट आन्दोलन के एक अन्य महत्त्वपूर्ण व्यक्ति मोहन बिक्रम सिंह पार्टी में शामिल हुए। युवा मोहन बिक्रम सिंह ने नेपाली कांग्रेस से अपने राजनीतिक जीवन की शुरुआत की थी और 1950-51 में जनवाद की स्थापना के लिए हुए जन-उभार में सक्रिय भागीदारी की थी। पार्टी की पहली कांग्रेस द्वारा राजतन्त्र के विरुद्ध अपनायी गयी अवस्थिति में स्पष्टता का अभाव था। पहली कांग्रेस ने पार्टी के पहले घोषणापत्र में सुधार करते हुए अपने क्रान्तिकारी कार्यक्रम को बदलने की दिशा में आगे क़दम बढ़ाया। यह प्रक्रिया 1955 में हुए पार्टी के दूसरे कन्वेंशन में भी जारी रही। पार्टी ने कार्यक्रम को ऐसा स्वरूप देने की शुरुआत की जो राजतन्त्रवाद और प्रतिक्रियावादी शक्तियों को भी स्वीकार्य हो। संशोधनवाद की दिशा में पार्टी का तेज़ी से बढ़ता झुकाव अब एकदम स्पष्ट हो चला था। 1955 में प्रतिक्रियावादियों की शर्तों के आगे झुकते हुए पार्टी महासचिव मनमोहन अधिकारी ने राजा को एक लिखित आवेदन दिया जिसमें शान्तिपूर्ण-आन्दोलन और संवैधानिक राजतन्त्र को मान्यता देने की शर्तों को स्वीकार किया गया था, ताकि पार्टी खुले तौर पर काम कर सके। पार्टी अब स्पष्टतः दक्षिणपन्थी अवसरवाद की दिशा में झुक चुकी थी। 1956 में पार्टी पर लगा प्रतिबन्ध हटा लिया गया।

संशोधनवादी भटकावों और उनके विरुद्ध संघर्षों का सिलसिला : गतिरोध और बिखराव के भँवर में ने.क.पा. (1957-68)

1957 में मनमोहन अधिकारी जब चीन की यात्रा पर गये तो डॉ. केशरजंग रायमाझी पार्टी के कार्यकारी महासचिव बनाये गये। रायमाझी के नेतृत्वकाल में पार्टी नेतृत्व के भीतर राजतन्त्रवादी लाइन निर्णायक रूप से हावी हो गयी और संसदवादी प्रभाव तेज़ी से बढ़ा। 1956 में सोवियत संघ की पार्टी की बीसवीं कांग्रेस में ख्रुश्चेवी संशोधनवाद की विजय हो चुकी थी और शान्तिपूर्ण संक्रमण की लाइन पूरी दुनिया की पार्टियों के संशोधनवादियों का मन्त्र बन चुका था। नेपाल की पार्टी के भीतर भी संशोधनवाद को बढ़ावा देने में ख्रुश्चेवी लहर ने अहम भूमिका निभायी। संसद और चुनावों के आकर्षण में पार्टी नेतृत्व ने संविधान सभा की अपनी लाइन को भी तिलांजलि दे दी।

1957 में हुई पार्टी की दूसरी कांग्रेस में संसदवाद के विरुद्ध क़तारों की क्रान्तिकारी भावना मुखर होकर सामने आयी और उसके प्रभाव में एक बार फिर जनवादी गणराज्य की स्थापना का लक्ष्य निर्धारित किया गया, लेकिन दूसरी ओर संशोधनवाद-विरोधी संघर्ष में क़तारों को दृढ़ नेतृत्व दे पाने वाले, सुस्पष्ट समझ वाले लोगों के अभाव में राजतन्त्रवादी डॉ. रायमाझी ही पार्टी के महासचिव चुने गये। नतीजतन यह कांग्रेस सही और ग़लत लाइन के बीच विचारधारात्मक समझौते की कांग्रेस बनकर रह गयी। इसी कांग्रेस में मोहन बिक्रम सिंह को भी केन्द्रीय कमेटी में चुना गया था। रायमाझी के नेतृत्व में पार्टी दूसरी कांग्रेस में पारित लाइन को लागू कर ही नहीं सकती थी। उल्टे दक्षिणपन्थी दिशा में पार्टी को धकेलने की रायमाझी गुट की कोशिशें और तेज़ हो गयीं। दूसरी कांग्रेस के तुरन्त बाद से ही पार्टी में दो लाइनों का संघर्ष लगातार तीव्र से तीव्रतर होता जा रहा था। 1960 में राजा महेन्द्र ने एक सैनिक "तख़्तापलट" के जरिये सरकार और संसद को भंग कर दिया। संसदीय प्रणाली को समाप्त करके पंचायती प्रणाली लागू की गयी जिसके अन्तर्गत लगभग सभी अधिकार राजा के हाथों में केन्द्रित थे तथा पंचायत सदस्यों और मन्त्रिमण्डल का काम राजा की मर्ज़ी पर मुहर लगानेभर का रह गया था। रायमाझी गुट ने राजा के इस क़दम का स्वागत किया। इस गुट का ग़द्दार चरित्र अब एकदम सामने आ चुका था। केन्द्रीय कमेटी में पुष्पलाल, तुलसी लाल अमात्य, मोहन बिक्रम सिंह, आदि ने रायमाझी गुट का दृढ़तापूर्वक विरोध किया। फ़रवरी 1961 में दरभंगा में आयोजित पार्टी प्लेनम मुख्यतः नेतृत्व के एक हिस्से की राजतन्त्रवादी और दूसरे हिस्से की नेपाली कांग्रेस समर्थक लाइन के विरोध पर केन्द्रित था। प्लेनम में एक बार फिर संविधान सभा के नारे को पारित किया। इसमें मोहन बिक्रम सिंह की एक अहम भूमिका थी। पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने, जिस पर रायमाझी गुट हावी था, दरभंगा प्लेनम के निर्णय को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। रायमाझी गुट ने यथाशीघ्र कांग्रेस बुलाने के प्लेनम के निर्णय को धता बताते हुए, और यहाँ तक कि पूरी केन्द्रीय कमेटी को दरकिनार करते हुए, बेशर्मी के साथ राजतन्त्रवादी गतिविधियाँ जारी रखीं। इस स्थिति में पार्टी की तीसरी कांग्रेस बुलाने के लिए एक 'इण्टर-ज़ोनल कोऑर्डिनेशन कमेटी' का गठन किया गया, जिसकी देखरेख में 1962 में पार्टी की तीसरी कांग्रेस हुई।

पार्टी की तीसरी कांग्रेस ने रायमाझी और उनके समर्थकों को निष्कासित करके राजतन्त्रवादी लाइन को पार्टी से उखाड़ फेंकने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी, लेकिन दूसरी ओर संशोधनवाद के साथ निर्णायक विच्छेद कर पाने में यह कांग्रेस विफल रही। पार्टी कांग्रेस में एक ऐसी धारा मौजूद थी जो राजा और पंचायती व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष में नेपाली कांग्रेस के प्रति समझौतावादी रुख अपनाने की पक्षधर थी। ख्रुश्चेवी संशोधनवाद के प्रभाव में पार्टी ने "राष्ट्रीय जनवाद" का कार्यक्रम पारित किया। साथ ही, "सम्प्रभु संसद" का रणकौशलात्मक (टैक्टिकल) नारा पारित किया गया। बाद में पार्टी महासचिव तुलसी लाल अमात्य ने स्वयं यह कहकर जनवादी गणराज्य की भावना को कमज़ोर कर दिया कि सम्प्रभु संसद का नारा गणराज्य का नारा नहीं था। तीसरी कांग्रेस के कार्यक्रम में राजतन्त्र के प्रति स्पष्टता का अभाव था और संशोधनवाद का प्रभाव मौजूद था। इसके कारण पार्टी क्रान्तिकारी सक्रियता के बजाय विशृंखलता और गतिरोध का शिकार हो गयी और उसकी एकता बस कहनेभर को ही रह गयी। पार्टी नेतृत्व के भीतर ग़ैर-सर्वहारा संस्कृति के प्रभाव ने समस्या को और अधिक गम्भीर बनाने का काम किया। नेतृत्वहीन और दिशाहीन पार्टी में विभाजन और बिखराव का सिलसिला शुरू हो गया।

लेकिन नेपाल में क्रान्ति जनता की प्रबल आकांक्षा थी और उसके वाहक कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी नेपाली कम्युनिस्ट आन्दोलन के गतिरोध को यूँ ही हाथ पर हाथ धरे बैठे देखते नहीं रह सकते थे। 1963 में ख्रुश्चेवी संशोधनवाद के विरुद्ध चीन की पार्टी का विचारधारात्मक संघर्ष 'महान बहस' के रूप में पूरी दुनिया की कम्युनिस्ट क़तारों के सामने आया। 1966 में चीन की पार्टी और राज्य के भीतर मौजूद संशोधनवादियों के विरुद्ध पहले से ही जारी संघर्ष 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति' के रूप में फूट पड़ा। इन युगान्तरकारी घटनाओं ने पूरी दुनिया की कम्युनिस्ट क़तारों को संशोधनवाद के विरुद्ध निर्णायक संघर्ष के लिए प्रेरित किया। नेपाल के कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी भी इससे अछूते नहीं रहे। एक क्रान्तिकारी पार्टी के निर्माण एवं गठन के लिए उन्हें नयी प्रेरणा और नयी दिशा मिली। 1968 से लेकर अगले एक दशक के दौरान एक क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी के पुनर्गठन की दिशा में तीन महत्त्वपूर्ण प्रयास हुए। इनमें से पहला पुष्पलाल ग्रुप द्वारा किया गया प्रयास था। दूसरा प्रयास मोहन बिक्रम सिंह, निर्मल लामा आदि द्वारा गठित 'सेण्ट्रल न्यूक्लियस' ने किया। तीसरा प्रयास झापा किसान संघर्ष का नेतृत्व करने वाले युवा कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों द्वारा गठित तालमेल कमेटी ने किया। आगे हम इन तीनों प्रयासों की क्रमवार चर्चा करेंगे।

1968 के बाद - पार्टी पुनर्गठन की तीन महत्त्वपूर्ण कोशिशें

1968 में पार्टी को पुनस्संगठित करने के लिए पुष्पलाल ने एक महत्त्वपूर्ण पहल की और एक राष्ट्रीय कन्वेंशन का

(पेज 7 पर जारी)

नेपाल का कम्युनिस्ट आन्दोलन

(पेज 7 से आगे)

आयोजन किया। पुष्पलाल के नेतृत्व वाली इस पुनर्गठित नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी ने स्पष्ट शब्दों में ख्रुश्चेवी संशोधनवाद का विरोध किया, मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा को अपना मार्गदर्शक सिद्धान्त बनाया, राजतन्त्र का विरोध किया और नवजनवादी क्रान्ति के प्रति अपनी प्रतिबद्धता ज़ाहिर की, लेकिन नेपाली कांग्रेस-समर्थक राजनीति से यह अपने को मुक्त नहीं कर सकी। नेपाली कांग्रेस से अलग और स्वतन्त्र आन्दोलन के लिए कोई पहलक़दमी ले पाने में यह विफल रही और नेपाली कांग्रेस-विरोधी संघर्ष को इसने पूरी तरह से दरकिनार कर दिया। नेपाली कांग्रेस द्वारा चलाये जा रहे आन्दोलन से अलग इसने किसी जुझारू संघर्ष को आगे बढ़ाने की कोई कोशिश नहीं की। नतीजतन, इस ग्रुप का जुझारू क्रान्तिकारी चरित्र भी क्षरित होने लगा, नेतृत्व में उदारवादी और संशोधनवादी रुझानें सिर उठाने लगीं और एक बार फिर अन्तर्पार्टी संघर्ष तीखा हो गया। अस्थायी तौर पर विभिन्न नये संगठनों के अस्तित्व में आने के प्रक्रिया में कुछ क्रान्तिकारी झापा आन्दोलन का सूत्रपात करने वाले तालमेल केन्द्र (कोऑर्डिनेशन सेण्टर) से जुड़ गये। कुछ अन्य उससे तब जुड़े जब तालमेल केन्द्र ने आगे चलकर नेकपा (मा-ले) का गठन कर लिया। कुछ अन्य कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों ने क्रान्तिकारी संघर्ष विकसित करने के लिए पुष्पलाल के नेतृत्व वाली पार्टी से अलग होकर स्वतन्त्र संगठन बनाने की कोशिश शुरू की जिसका नेतृत्व रोहित कर रहे थे। पुष्पलाल की अन्य सुधारवादी नीतियों के अतिरिक्त रोहित का ग्रुप उनके द्वारा पूर्वी पाकिस्तान (वर्तमान बांग्लादेश) में भारतीय सैन्य कार्रवाई के समर्थन का भी विरोध कर रहा था। रोहित ग्रुप ने 1978 में सर्वहारा क्रान्तिकारी संगठन, नेपाल और 'किसान समिति' के साथ मिलकर 'नेपाल वर्कर्स एण्ड पीजेण्ट्स ऑर्गनाइज़ेशन' (एन.डब्ल्यू.पी.ओ.) बनाया। 1981 में यह संगठन दो हिस्सों में विभाजित हो गया। रोहित के नेतृत्व वाले एन.डब्ल्यू.पी.ओ. (जिसने बाद में अपना नाम एन.डब्ल्यू.पी.पी. यानी 'नेपाल वर्कर्स एण्ड पीजेण्ट्स पार्टी' रख लिया) से अलग होकर हरे राम शर्मा के नेतृत्व वाले एन.डब्ल्यू.पी.ओ. ने 'प्रोलेतारियन कम्युनिस्ट लीग' नामक एक अन्य कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी संगठन के साथ, जो विपरीत परिस्थितियों में गठित होने के बाद क्रान्तिकारी दिशा में आगे बढ़ने के लिए प्रयासरत था, मिलकर 'सर्वहारा श्रमिक संगठन, नेपाल' (पी.एल.ओ., नेपाल) का गठन किया। पी.एल.ओ., नेपाल ने 1990 तक मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा की रोशनी में एक क्रान्तिकारी लाइन विकसित करने की ईमानदार कोशिशें कीं और फिर एक महत्त्वपूर्ण एकता-प्रक्रिया का भागीदार बना गया, जिसकी चर्चा हम आगे करेंगे। पुष्पलाल के नेतृत्व वाली पार्टी से 1976 में एक महत्त्वपूर्ण छात्र नेता मदन कुमार भण्डारी भी अलग हो गये और 'मुक्ति मोर्चा समूह' का गठन किया। 'मुक्ति मोर्चा समूह' ने झापा आन्दोलन के बचे हुए लोगों द्वारा 1975 में गठित 'अखिल नेपाल कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी तालमेल कमेटी' (मा-ले) के साथ मिलकर 1978 में ने.क.पा. (मा-ले) का गठन किया। इस धारा की विस्तृत चर्चा आगे की जायेगी। इन फूटों के बाद पुष्पलाल के नेतृत्व वाली पार्टी का प्रभाव काफ़ी कम हो गया। 1978 में पुष्पलाल की मृत्यु हो गयी। उनकी अन्त्येष्टि में उमड़ी भीड़ राजनीतिक विरोध-प्रदर्शन का एक माध्यम बन गयी थी। पुष्पलाल नेपाल के कम्युनिस्ट आन्दोलन के संस्थापकों में सर्वप्रमुख थे। वे एक ईमानदार कम्युनिस्ट थे, विचार-सम्पन्न थे और सरल हृदय होने के नाते जनप्रिय थे, लेकिन उदारतावादी रुझानों और दक्षिणपन्थी विच्युतियों के कारण नेपाल के कम्युनिस्ट आन्दोलन को एकजुट, जुझारू और सही दिशा में गतिशील बना पाने में वे विफल रहे। फिर भी नेपाली कम्युनिस्ट आन्दोलन उनके अवदानों की कभी उपेक्षा नहीं कर सकता। पुष्पलाल की मृत्यु के बाद उनकी पत्नी सहाना प्रधान के नेतृत्व में पार्टी ने नेपाली कांग्रेस के साथ सहकार-सहयोग की नीतियों को ही लगातार आगे बढ़ाया, जिसकी तार्किक परिणति अन्ततः संशोधनवाद की धारा में जा मिलने के रूप में सामने आयी। इसकी चर्चा आगे की जायेगी।

1968-1978 के दशक में पार्टी को पुनस्संगठित करने की दूसरी महत्त्वपूर्ण पहल 'सेण्ट्रल न्यूक्लियस' ने की। अब हम संक्षेप में इसकी चर्चा करेंगे। मोहन बिक्रम सिंह और कुछ अन्य प्रमुख कम्युनिस्ट नेता सैनिक तख़्तापलट (1961) का विरोध करने के कारण 1962 से ही जेल में थे। 1971 में जेल से रिहाई के बाद मोहन बिक्रम सिंह ने निर्मल लामा, शम्भूराम श्रेष्ठ और मनमोहन अधिकारी के साथ मिलकर 'सेण्ट्रल न्यूक्लियस' का गठन किया। पुष्पलाल शुरू से ही इस प्रयास में शामिल नहीं हुए और जल्दी ही मनमोहन अधिकारी और शम्भूराम ने भी स्वयं को इस प्रक्रिया से अलग कर लिया। 'सेण्ट्रल न्यूक्लियस' ने नेकपा (पुष्पलाल ग्रुप) के साथ एकता का लक्ष्य घोषित किया, लेकिन व्यवहार में ऐसा कोई क़दम नहीं उठाया गया। इसके विपरीत, 'सेण्ट्रल न्यूक्लियस' द्वारा 1974 में आयोजित पार्टी की चौथी कांग्रेस ने पुष्पलाल के उदारतावादी रुझान और, नेपाली कांग्रेस के प्रति समझौतावादी लाइन की दोस्ताना आलोचना करने और बहस चलाने के बजाय उन्हें "ग़द्दार" घोषित कर दिया। मोहन बिक्रम सिंह के इस संकीर्णतावादी रवैये से एकता-प्रक्रिया निश्चय ही प्रभावित हुई। "झापा आन्दोलन" में अति वामपन्थी भटकाव के शिकार क्रान्तिकारियों के प्रति भी 'सेण्ट्रल न्यूक्लियस' ने कमोबेश यही रुख अपनाया और उनके साथ सैद्धान्तिक वाद-विवाद चलाये बिना उनके ऊपर अन्तिम निर्णय सुनाकर असंवाद-सम्बन्ध बना लिया गया। यदि उनके प्रति सिद्धान्तनिष्ठ संघर्ष का रास्ता अपनाया जाता तो कम से कम उनके एक हिस्से को "वामपन्थी" दुस्साहसवादी भटकाव से और फिर दक्षिणपन्थी भटकाव के दूसरे छोर तक जाने से शायद बचाया जा सकता था। पर ऐसा नहीं हो सका। बावजूद इन ग़लतियों के, नेपाल के कम्युनिस्ट आन्दोलन में 'सेण्ट्रल न्यूक्लियस' ने महत्त्वपूर्ण सकारात्मक भूमिका निभायी, इसका प्रमाण यह तथ्य है कि आज जो भी नेपाल की क्रान्तिकारी वामधारा है, वह मुख्यतः 'सेण्ट्रल न्यूक्लियस' के प्रयासों से आगे बढ़ी एकता-प्रक्रिया की ही उपज है। 1974 में 'सेण्ट्रल न्यूक्लियस' ने पार्टी की चौथी कांग्रेस बुलायी। चूँकि इस कांग्रेस को अन्य कम्युनिस्ट ग्रुपों ने मान्यता नहीं दी थी, इसलिए इस कांग्रेस के बाद मोहन बिक्रम सिंह के नेतृत्व वाली पार्टी को ने.क.पा. (चौथी कांग्रेस) के नाम से जाना गया। चौथी कांग्रेस ने माओ त्से-तुङ विचारधारा का परचम उठाते हुए संशोधनवाद और राजतन्त्र-समर्थक नेपाली कांग्रेस समर्थक दक्षिणपन्थी राजनीति का विरोध किया। साथ ही, इसने कठमुल्लावाद, यान्त्रिक अंधानुकरण-वृत्ति और अतिवामपन्थी भटकाव का भी विरोध किया तथा सशस्त्र संघर्ष की अनिवार्यता और एक भूमिगत पार्टी-निर्माण पर ज़ोर दिया। इस तरह, पार्टी एकता की प्रक्रिया में संकीर्णतावादी रुख अपनाने के बावजूद ने.क.पा. (चौथी कांग्रेस) उस समय सापेक्षतः सबसे सही क्रान्तिकारी धारा का प्रतिनिधित्व कर रही थी, क्योंकि "वामपन्थी" और दक्षिणपन्थी भटकावों के बारे में, मूल विचारधारात्मक प्रश्नों पर और लेनिनवादी सांगठनिक उसूलों के मामले में उसकी अवस्थिति मूलतः सही थी। इसलिए 1974 के बाद के कुछ वर्षों के दौरान इसने एक सकारात्मक एवं रचनात्मक भूमिका निभायी और महत्त्वपूर्ण प्रगति की। लेकिन पार्टी के न्यूनतम कार्यक्रम, प्रधान अन्तरविरोध, संयुक्त मोर्चा आदि प्रश्नों पर ने.क.पा. (चौथी कांग्रेस) की अवस्थिति सही नहीं थी और सशस्त्र संघर्ष की प्रकृति के बारे में भी नेतृत्व की समझ स्पष्ट नहीं थी। फलतः कुछ वर्षों के तेज़ विकास और 1979 तक सबसे बड़ी क्रान्तिकारी वाम पार्टी बन जाने के बाद संगठन में आन्तरिक अन्तरविरोध बढ़ने लगे। मुख्यतः महासचिव मोहन बिक्रम सिंह की ग़ैर जनवादी, संकीर्णतावादी कार्य पद्धति के कारण ये अन्तरविरोध हल होने के बजाय 1985 में फूट की परिणति तक जा पहुँचे। इस विभाजन के केन्द्र में मुख्यतः मतभेद के तीन मुद्दे थे। पहला प्रधान अन्तरविरोध का सवाल था। मोहन बिक्रम सिंह ग्रुप का कहना था कि भारतीय विस्तारवाद और देशी प्रतिक्रियावाद दोनों के साथ नेपाली जनता का अन्तरविरोध प्रधान अन्तरविरोध है। निर्मल लामा, प्रकाश आदि का कहना था कि बुनियादी अन्तरविरोध तो उक्त दोनों के साथ है, लेकिन प्रधान अन्तरविरोध देशी प्रतिक्रियावाद के साथ ही है। संयुक्त मोर्चे के सवाल पर मोहन बिक्रम सिंह का रुख वाम संकीर्णतावादी था। उनका मानना था कि स्थानीय स्तर पर तो संयुक्त मोर्चा बनाया जा सकता है, लेकिन राष्ट्रीय स्तर पर नहीं बनाया जा सकता। दूसरा धड़ा इस अवस्थिति का विरोध करते हुए विचारधारात्मक दृष्टि से अधिक सुसंगत अवस्थिति अपना रहा था। मतभेद का तीसरा मुद्दा चुनाव के इस्तेमाल को लेकर था। निर्मल लामा, प्रकाश आदि का धड़ा भण्डाफोड़ और क्रान्तिकारी प्रचार के लिए पंचायती चुनाव के भी इस्तेमाल का पक्षधर था जबकि मोहन बिक्रम सिंह का धड़ा इस अवस्थिति का विरोध कर रहा था। इसके अतिरिक्त दोनों धड़ों के बीच इतिहास के मूल्यांकन (विशेषकर, नेपाल में 1950 में हुए बदलाव और नेपाली कम्युनिस्ट आन्दोलन के इतिहास के कुछ मुद्दों को लेकर) को लेकर भी मतभेद था। 1985 में निर्मल लामा, प्रकाश आदि का धड़ा मोहन बिक्रम सिंह के धड़े से अलग हो गया। पहले धड़े ने ने.क.पा. (चौथी कांग्रेस) नाम से ही काम जारी रखा जबकि दूसरे ने अपना नाम ने.क.पा. (मसाल) रखा। इसके कुछ ही समय बाद मोहन बिक्रम सिंह के नेतृत्व वाला ने.क.पा. (मसाल) भी दो हिस्सों में विभाजित हो गया। संगठन का बड़ा हिस्सा किरण वैद्य, प्रचण्ड आदि के नेतृत्व में अलग हो गया और उसने ने.क.पा. (मशाल) के नाम से काम करना शुरू कर दिया। इस फूट के समय 'मसाल' और 'मशाल' के बीच कोई बुनियादी विचारधारात्मक-राजनीतिक मतभेद नहीं था। मूल मुद्दा महासचिव मोहन बिक्रम सिंह की कार्यशैली और नेतृत्व दे पाने की उनकी विफलता से संगठन में पैदा होने वाले ठहराव को लेकर था। अलग होने के बाद ने.क.पा. (मशाल) ने कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों के एक अन्तरराष्ट्रीय मंच 'क्रान्तिकारी अन्तरराष्ट्रीयतावादी आन्दोलन' (रिम) और विशेषकर आर.सी.पी., यू.एस.ए. व पेरु की क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी के विचारधारात्मक प्रभाव में 'माओ विचारधारा' की जगह माओवाद को अपना मार्गदर्शक सिद्धान्त घोषित किया। पहले 'मसाल' और 'मशाल' दोनों ही ग्रुप 'रिम' से जुड़े हुए थे। बाद में मोहन बिक्रम सिंह के नेतृत्व वाला 'मसाल' ग्रुप माओवाद के प्रश्न पर 'रिम' से अलग हो गया। अब पश्चदृष्टि से देखते हुए कहा जा सकता है कि 1985-90 के दौरान मुख्य अन्तरविरोध, संयुक्त मोर्चा, न्यूनतम कार्यक्रम आदि बुनियादी प्रश्नों पर ने.क.पा. (चौथी कांग्रेस) की अवस्थिति सर्वाधिक सुसंगत थी जबकि ने.क.पा. (मसाल) और ने.क.पा. (मशाल) की अवस्थितियाँ विसंगतिपूर्ण रही थीं और समय-समय पर बदलती रही थीं। ने.क.पा. (मशाल) के नेता पहले किरण थे, बाद में प्रचण्ड ने नेतृत्व की बागडोर सम्हाली। 1990 के बाद ने.क.पा. (मशाल) और ने.क.पा. (चौथी कांग्रेस) की एकता और फिर फूट तथा उत्तरवर्ती घटनाक्रम की चर्चा हम आगे करेंगे।

1970 के दशक में पार्टी एकता की तीसरी महत्त्वपूर्ण पहल झापा संघर्ष से निकले कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों की युवा पीढ़ी ने की। झापा आन्दोलन 1971 में भारत के सीमावर्ती क्षेत्र में कुछ युवा कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों ने भारत के नक्सलबाड़ी किसान उभार के प्रभाव में शुरू किया था, पर शुरू से ही इस आन्दोलन में चारु मजुमदार की "वामपन्थी" दुस्साहसवादी लाइन लागू की गयी। मई 1971 में सी.पी. मैनाली, राधाकृष्ण मैनाली, मोहन चन्द्र अधिकारी आदि ने.क.पा. की झापा ज़िला कमेटी के युवा नेताओं ने भूस्वामियों सहित अन्य वर्गशत्रुओं की "सफाये" की लाइन लागू करनी शुरू की। पार्टी ने इस कार्रवाई का विरोध किया और यह ग्रुप पार्टी से अलग हो गया। झापा आन्दोलन ज़बरदस्त दमन के द्वारा कुचल दिया गया लेकिन यह ग्रुप झापा के किसानों के बीच भूमिगत रूप से सक्रिय रहा। 1975 में इसी ग्रुप की पहल पर 'अखिल नेपाल कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी तालमल कमेटी' (मा-ले) का गठन हुआ जिसमें कई अन्य छोटे-छोटे कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी ग्रुप भी शामिल हुए। 1976 में ने.क.पा. (पुष्पलाल) से अलग होकर मदन कुमार भण्डारी ने 'मुक्ति मोर्चा समूह' बनाया जो फिर तालमेल कमेटी से जुड़ गया। तालमेल कमेटी ने 26 दिसम्बर 1978 को स्थापना कांग्रेस आयोजित करके ने.क.पा. (मा-ले) का गठन किया। जिसके प्रथम महासचिव सी.पी. मैनाली चुने गये। ने.क.पा. (मा-ले) शुरू से ही विनोद मिश्र के नेतृत्व वाली भा.क.पा. (मा-ले) के साथ घनिष्ठ सम्पर्क में रही और उसी के नक्शेक़दम पर चलती हुई उससे कालान्तर में अतिवामपन्थी भटकाव से दक्षिणपन्थी भटकाव के दूसरे छोर तक की यात्रा की। "वामपन्थी" भटकाव को ठीक करने के नाम पर ने.क.पा. (मा-ले) धीरे-धीरे पूरी तरह से एक संसदीय वामपन्थी पार्टी में तब्दील हो गयी और 1990 के बाद नेपाल की प्रमुख संशोधनवादी पार्टियों की मुख्य धुरी बनकर उभरी। ऊपर हम चर्चा कर चुके हैं कि सेण्ट्रल न्यूक्लियस द्वारा पार्टी-पुनर्गठन के प्रयासों से मनमोहन अधिकारी के ग्रुप ने अपने को अलग कर लिया था। 1979 में उसने स्वयं को एक अलग पार्टी के रूप में संगठित किया। उधर पुष्पलाल की मृत्यु के बाद उनके नेतृत्व वाली ने.क.पा का नेतृत्व सहाना प्रधान ने सम्हाला। 1978-79 से आगे के वर्षों में इन पार्टियों के संसदीय विपथगमन की प्रक्रिया तेज़ गति से आगे बढ़ी और 1986 में इनकी एकता के बाद ने.क.पा. (मार्क्सवादी) अस्तित्व में आई जो काफ़ी हद तक भाकपा (मार्क्सवादी) जैसी ही संशोधनवादी पार्टी थी और भा.क.पा. (मा.) से उसके निकट सम्बन्ध भी थे। 1991 में ने.क.पा. (मा.) और ने.क.पा. (मा-ले) की एकता के बाद ने.क.पा. (एकीकृत मा-ले) अस्तित्व में आई जिसके महासचिव मदन कुमार भण्डारी चुने गये, जो पहले ने.क.पा. (मा-ले) के महासचिव थे। मनमोहन अधिकारी पार्टी के चेयरमैन चुने गये। 1993 में मदन कुमार भण्डारी की एक दुर्घटना में मृत्यु के बाद से पार्टी महासचिव माधवकुमार नेपाल हैं। मनमोहन अधिकारी की अप्रैल, 1999 में मृत्यु हो गयी। 1991 से लेकर अब तक के समय में ने.क.पा. (मा-ले) में कई फूटें हुई और कई छोटी-मोटी संशोधनवादी पार्टियों के साथ उनकी एकता भी हुई। आज नेपाल में कई संशोधनवादी वामपन्थी पार्टियाँ मौजूद हैं, लेकिन उनमें ने.क.पा. (मा-ले) ही सबसे बड़ी है और संशोधनवादी ध्रुवीकरण का केन्द्र है। इसकी संक्षिप्त चर्चा हम आगे करेंगे।

कुल मिलाकर, निबन्ध के इस हिस्से में हमने नेपाल में 1968 के बाद पार्टी-पुनर्गठन की दिशा में हुए तीन प्रयासों की चर्चा की है। इनमें से पुष्पलाल की धारा अपनी विचारधारात्मक कमज़ोरियों की तार्किक परिणति के तौर पर अन्ततः संशोधनवादी पंककुण्ड में जा गिरी। झापा-संघर्ष के उत्तराधिकारी भी अतिवामपन्थी छोर से दक्षिणपन्थी छोर तक जा पहुँचे और फिर मुख्य संशोधनवादी धाराएँ एक हो गयीं। 'सेण्ट्रल न्यूक्लियस' के प्रयास विभिन्न भटकावों एवं समस्याओं तथा फूटों और एकताओं के बीच से आगे बढ़े। 1991 में नेपाल की क्रान्तिकारी वामधारा का जो नया उभार सामने आया, उसके ज़्यादातर संघटक संगठनों का अतीत 'सेण्ट्रल न्यक्लियस' से ही जुड़ा रहा है। इसकी चर्चा हम निबन्ध के अगले भाग में करेंगे।

1990 का जनान्दोलन और क्रान्तिकारी वाम का नया उभार

1990 का राजतन्त्र-विरोधी देशव्यापी जनान्दोलन नेपाल के इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण मोड़-बिन्दु और एक मील का पत्थर था। इस आन्दोलन के परिणामस्वरूप नेपाल में बहुदलीय जनतन्त्र की स्थापना हुई और एक दशक के भीतर नेपाली कांग्रेस और ने.क.पा. (एमाले) सहित सभी बुर्जुआ और संशोधनवादी पार्टियों का घटिया अवसरवादी, सत्ताभोगी चेहरा जनता के सामने एकदम नंगा हो गया। यह स्पष्ट हो गया कि यह नेपाली कांग्रेस 1950 के दशक की नेपाली कांग्रेस का विकृत, पतित

(पेज 14 पर जारी)

नेपाल में संविधान सभा का चुनाव...

(पेज 1 से आगे)

रवाना हुए तो चुनाव परिणामों को लेकर बहुत आश्वस्त नहीं थे। आशंकाएँ इस बात को लेकर भी थीं कि चुनाव सम्पन्न हो भी सकेंगे या नहीं। लेकिन वहाँ पहुँचने के बाद और अलग-अलग तबकों के लोगों से मिलने-जुलने के बाद हमें यह लगने लगा था कि नेपाल की व्यापक जनता क्रान्तिकारी बदलाव के पक्ष में है। पूँजीवादी संसदीय चुनाव प्रणाली जनभावनाओं का वास्तविक पैमाना तो नहीं हो सकती। इसलिए नेकपा (माओवादी) को बहुमत मिलेगा या नहीं, यह तो निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता था, पर इतना तो तय लग रहा था कि वे एक बड़ी और निर्णायक ताकत बनकर संविधान सभा में आयेंगे।

चुनाव के दो दिन पहले से चुनाव के अगले दिन तक के दौरान काठमाण्डो घाटी में हम काफी लोगों से मिले। जिन आम लोगों से हमारी बातचीत हुई उनमें नेपाली कांग्रेस और एमाले के मुखर समर्थकों की संख्या ज्यादा थी। माओवादियों के भी कुछ मुखर समर्थक थे। लेकिन सबसे ज़्यादा संख्या उन लोगों की थी जो खुलकर कुछ कहने में तो हिचकते थे लेकिन अगर कुछ देर आत्मीयता से बात की जाये तो यह अनुमान लगाया जा सकता था कि आम मेहनतकश आबादी में माओवादियों को व्यापक समर्थन हासिल है। यह बात तो बिल्कुल स्पष्ट थी कि राजा को बनाये रखने के मुद्दे पर जो भी समझौता होगा उसे नेपाली जनता कूड़ेदान के हवाले करेगी। राजशाही के खात्मे का एजेण्डा तो माओवादियों का था लेकिन उनकी सबसे बड़ी सफलता यह रही कि उन्होंने इसे नेपाल की व्यापक जनता का एजेण्डा बना दिया। संवैधानिक राजतन्त्र या किसी भी रूप में राजतन्त्र को बरकरार रखने की बातें करके नेपाली कांग्रेस और नेकपा (एमाले) ने अपनी स्थिति और कमजोर कर ली। जबकि क्रान्तिकारी वाम इस मुद्दे पर शुरू से दृढ़ रहा। इस लिहाज़ से चुनाव में माओवादियों की सफलता कतई अप्रत्याशित नहीं थी।

चुनाव के पूरे दौर में माओवादियों ने अपनी बातों को जनता के बीच ले जाने में भी बहुत कुशलता का परिचय दिया। उनका चुनाव घोषणापत्र सबसे स्पष्ट ढंग से नेपाली जनता की आकांक्षाओं को प्रस्तुत करता था। चाहे नेपाल की विभिन्न उत्पीड़ित जनजातियों और राष्ट्रीयताओं के अधिकारों की बात हो, नेपाल की राष्ट्रीय सम्प्रभुता को विस्तारित और मज़बूत बनाने के लिए विभिन्न असमान सन्धियों को समाप्त करने की बात हो, या नेपाल की आम आबादी की भयंकर ग़रीबी और अपमान को दूर करने की ठोस योजनाओं की बात हो माओवादियों ने अपनी बातें बिल्कुल स्पष्ट ढंग से रखीं और उन्हें आम जनता के दिलों तक पहुँचाने में सफल रहे। नेपाल के सुदूर अंचलों और ग्रामीण इलाक़ों में तो उनका मज़बूत आधार पहले ही क़ायम हो चुका था लेकिन काठमाण्डो घाटी और शहरों में उनकी स्थिति अप्रैल 2006 के जनान्दोलन के पहले तक उतनी मज़बूत नहीं थी। लेकिन उन्होंने बहुत कुशलता के साथ शहरों में भी लोगों को अपने प्रचार और जनकार्य से कायल किया। पार्टी कतारों से जहाँ-जहाँ गलतियाँ हुईं उन्हें स्वीकारने और आलोचना करने के मामले में भी उन्होंने पारदर्शी रवैया अपनाया। जनता ने उनकी इस कार्यशैली को भी सराहा और इससे माओवादियों को लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने में काफी मदद मिली।

काण्ठमाण्डो में विभिन्न बुद्धिजीवियों से बातचीत में यह भी साफ हुआ कि माओवादियों के युवा संगठन 'यंग कम्युनिस्ट लीग' (वाई.सी.एल.) के "आतंक" को लेकर फैलायी जा रही बातें किस कदर झूठी हैं और बढ़ा-चढ़ाकर पेश की जा रही हैं।

चार दिनों के दौरान काठमाण्डो घाटी के शहरी और कुछ ग्रामीण इलाकों में बहुत लोगों से हमारी जो बातचीत हुई, बुद्धिजीवियों, पत्रकारों, अधिकारियों और अन्य पार्टी स्रोतों से जो जानकारियाँ मिलीं उनसे हमने चुनाव परिणामों का जो आकलन बनाया था वह काफ़ी हद तक सही साबित हुआ। हालाँकि ऐन चुनाव के पहले वाली शाम तक नेपाल में संशय और आशंका का माहौल था लेकिन आम लोगों की बातचीत से हमें यह लग रहा था कि व्यापक जनता शान्तिपूर्ण ढंग से चुनाव होने के पक्ष में है और जो इसमें गड़बड़ी करेगा उसे जनता के कोप का शिकार होना पड़ेगा। इस डर के कारण भी प्रतिक्रियावादी शक्तियों को छिटपुट प्रयासों के अलावा कुछ करने की हिम्मत नहीं हुई।

●

आठ अप्रैल को हम लोग काठमाण्डो पहुँचे तो शहर का दृश्य देखकर ऐसा महसूस ही नहीं हो रहा था कि दो दिन बाद यहाँ देश के इतिहास में सबसे महत्त्वपूर्ण चुनाव होने वाला है। हिन्दुस्तान में चुनावी माहौल के साथ जुड़ी गहमागहमी, पोस्टरों और नारों से पटी दीवारें और सड़कों पर झण्डे-बैनर व होर्डिंगों के दृश्य देखने की अभ्यस्त हमारी नज़रें यहाँ भी ऐसा ही कुछ तलाश रही थीं लेकिन पहले से लिखे हुए नेकपा (माओवादी) के कुछ नारों और एकाध होर्डिंग के अलावा हमें कोई प्रचार सामग्री कहीं नज़र नहीं आयी। पता चला कि चुनाव आयोग ने इस पर पूरी पाबन्दी लगा रखी है। चुनाव और नेपाली नववर्ष के कारण ज्यादातर कार्यालयों में छुट्टी थी और बड़ी संख्या में लोग मतदान के लिए घाटी से बाहर अपने घरों को चले गये थे। इसलिए सड़कों पर चहल-पहल भी बहुत कम दिखायी दे रही थी। मौसम खुशगवार था और खूबसूरत काठमाण्डो घाटी में शान्ति पसरी हुई थी। पूरा माहौल मानो कई भारतीय पत्रकार मित्रों द्वारा व्यक्त की जा रही चुनावी हिंसा और अशान्ति की आशंका को गलत साबित कर रहा था।

प्रेस कार्ड आदि बनवाने के लिए सूचना विभाग के कार्यालय जाते हुए टैक्सी ड्राइवर किशन से हुई हमारी बातचीत ने भी यही संकेत दिया। किशन ने साफ कहा कि लोग इस बात को समझते हैं कि इस चुनाव से नेपाल का भविष्य तय होना है। अगर इस बार चुनाव शान्ति से सम्पन्न नहीं हुए तो राजशाही से मुक्ति का रास्ता बंद हो जायेगा और राजा सेना के बल पर अपना निरंकुश शासन फिर से देश पर थोप देगा। उसने कहा कि गाँव के कुछ बुजुर्गों को छोड़कर कोई भी राजा को बचाये रखना नहीं चाहता। थोड़ा और खुलने पर किशन ने कहा कि माओवादियों की नीतियाँ तो लोगों को अच्छी लगती हैं लेकिन सत्ता में आ जाने के बाद उनका व्यवहार कैसा होगा, इसे लेकर थोड़ी आशंका भी है। उसने यह भी कहा, जिस बात को बाद में कई और लोगों ने भी दोहराया, कि आबादी का निचला तबका, मेहनत-मजूरी करने वाले लोग ज़्यादातर माओवादियों के पक्ष में हैं। ऊपरी तबके व्यापारी, अफसर, ज़मींदार, गाड़ी-बंगले वाले उनके खिलाफ हैं।

नेकपा (माओवादी) के अध्यक्ष प्रचण्ड के चुनाव क्षेत्र में मतदान के लिए जुटे लोग

सूचना विभाग के कार्यालय में पास बनवाने के दौरान कई भारतीय और कुछ विदेशी पत्रकारों से बातचीत हुई। इससे भी लगा कि चुनावी हिंसा और गड़बड़ी की आशंकाओं के बारे में नेपाल के बाहर किस क़दर माहौल बनाया गया है। फिजूल के मुद्दों और मामूली घटनाओं को लेकर दिन भर शोर मचाने वाले भारतीय खबरिया चैनलों और प्रिंट मीडिया के विराट तन्त्र के लिए भारत के सबसे निकट के इस पड़ोसी देश में हो रहे ऐतिहासिक चुनाव जैसे कोई बड़ी खबर ही नहीं थे। एक संवाददाता ने बिल्कुल ठीक ही कहा कि ज़्यादातर मीडिया घराने इस इन्तज़ार में थे कि माओवादियों के हारने की खबरों को जोर-शोर से प्रचारित किया जाए। लेकिन वे पहले से कुछ कहने का जोखिम भी नहीं उठाना चाहते थे।

आठ मई की शाम को काठमाण्डो की सड़कों पर घूमते हुए हम लोग आम लोगों से बातचीत करके माहौल का जायज़ा लेने की कोशिश करते रहे। मैग्ज़ीन स्टॉल, पीसीओ, चाय की दुकान से लेकर बड़े शोरूम तक हमने खरीदारों, वहाँ काम करने वालों और दूसरे लोगों से बातचीत की। ज्यादातर लोग खुलकर बात करने में हिचक रहे थे लेकिन दो बातों पर अधिकांश की एक राय थी। पहली यह कि चुनाव के बाद राजा को जाना होगा, और दूसरी यह कि इस चुनाव के बाद "नये नेपाल" का निर्माण होगा। ध्यान देने की बात यह है कि ये दोनों ही माओवादियों के मुख्य नारे थे।

नेपाल के क्रान्तिकारी आन्दोलन से दुनिया को परिचित कराने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले वरिष्ठ भारतीय पत्रकार आनन्द स्वरूप वर्मा और नेपाल के मानवाधिकार कार्यकर्ता प्रमोद काफले से उसी दिन हुई बातचीत में भी यह बात उभरकर आयी कि चुनाव के बाद माओवादी एक बड़ी ताक़त बनकर आयेंगे। उन्होंने कहा कि अगर बाहरी हस्तक्षेप या षड्यन्त्र से कोई बड़ी गड़बड़ी करायी जाती है या राजा की ओर से कोई षड्यन्त्र करके चुनाव नहीं होने दिया जाता है तो अप्रैल 2006 जैसे या उससे भी बड़े जनउभार से इन्कार नहीं किया जा सकता।

अगले दिन सुबह ही नेपाल के कुछ प्रमुख वामपंथी लेखकों और राजनीतिक कार्यकर्ताओं से हमारी लम्बी बातचीत हुई। इनमें नेपाल के प्रसिद्ध लेखक-आलोचक और नेकपा (एकता केन्द्र) से जुड़े वरिष्ठ राजनीतिक कार्यकर्ता निनु चापागाईं, नेपाल सरकार में स्वास्थ्य मन्त्री के सलाहकार और राजनीतिक कार्यकर्ता तथा कवि महेश मास्के, दैनिक समाचारपत्र 'नयां पत्रिका' के प्रधान सम्पादक स्नेहा सयामी और कवयित्री लक्ष्मी माली शामिल थे। इन बुद्धिजीवियों का कहना था कि अगर सभी वामपन्थी शक्तियाँ गणतन्त्र के सवाल पर एकजुट होकर लड़तीं तो इसमें कोई शक नहीं था कि वे दो-तिहाई से अधिक बहुमत लेकर आतीं। लेकिन भारत के दबाव, एमाले नेताओं की समझौतापरस्ती और कुछ हद तक नेकपा (माओवादी) की चूक के कारण ऐसा नहीं हो सका।

उन्होंने बताया कि नेकपा (माओवादी) और नेकपा (एकता केन्द्र) के बीच एकता की प्रक्रिया तेज़ी से आगे बढ़ रही थी। लगभग सभी महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर दोनों पार्टियों के बीच सहमति बन चुकी थी। लेकिन चुनाव के ऐन पहले इस प्रक्रिया में ठहराव आ गया। उन्होंने कहा कि इस स्थिति के लिए मुख्य रूप से नेकपा (माओवादी) का रवैया जिम्मेदार था। दोनों पार्टियों के बीच चुनावी तालमेल भी उस ढंग से नहीं हो सका जैसी अपेक्षा थी। उन्होंने कहा कि अगर एकता हो जाती तो क्रान्तिकारी वाम के पक्ष में देशव्यापी लहर पैदा हो सकती थी और एमाले जैसी संशोधनवादी पार्टी भी क्रान्तिकारी वाम के नेतृत्व में गठबन्धन में शामिल होने के लिए मजबूर हो जाती। लेकिन काफ़ी प्रयास के बाद भी यह एकता नहीं हो सकी। हालाँकि इस दिशा में पार्टी एकता संयोजन समिति के गठन की बात तय हो चुकी थी और प्रचण्ड तथा एकता केन्द्र के नेता प्रकाश का संयुक्त वक्तव्य भी जारी हो चुका था। चुनावी तालमेल नहीं हो पाने में मुख्य गलती नेकपा (माओवादी) की ही थी। पहले दौर की बातचीत के बाद 17 सीटों पर तालमेल का निर्णय हुआ जिनमें से 11 नेकपा (माओवादी) के लिए और 6 एकता केन्द्र के राजनीतिक फ्रंट 'जनमोर्चा' के लिए छोड़ी जानी थीं। इसके बाद बातचीत आगे नहीं बढ़ी और नेकपा (माओवादी) की ओर से इन सीटों पर हुए करार का भी पालन नहीं किया गया।

महेश मास्के और निनु चापागाईं ने बताया कि माओवादियों को इस मुकाम तक लाने में एकता केन्द्र ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। एकता केन्द्र ने उस समय जनयुद्ध शुरू करने के माओवादियों

(पेज 9 पर जारी)

नेपाल के चुनाव परिणाम : एक नज़र में

पार्टियाँ	कुल सीटें	प्रत्यक्ष चुनाव	आनुपातिक प्रतिनिधित्व
नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)	220	120	100
नेपाली कांग्रेस	110	37	73
नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (एमाले)	103	33	70
मधेशी जनाधिकार मंच	52	30	22
तराई मधेश लोकतान्त्रिक पार्टी	20	9	11
सद्भावना पार्टी (महतो)	9	4	5
राष्ट्रीय प्रजातन्त्र पार्टी	8	–	8
नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (माले)	8	–	8
जनमोर्चा नेपाल	7	2	5
नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (संयुक्त)	5	–	5
राष्ट्रीय प्रजातन्त्र पार्टी नेपाल	4	–	4
राष्ट्रीय जनमोर्चा	4	1	3
नेपाल मज़दूर किसान पार्टी	4	2	2
राष्ट्रीय जनशक्ति पार्टी	3	–	3
राष्ट्रीय जनमुक्ति पार्टी	2	–	2
नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (एकीकृत)	2	–	2
नेपाल सद्भावना पार्टी (आनन्दी देवी)	2	–	2
नेपाली जनता दल	2	–	2
संघीय लोकतान्त्रिक राष्ट्रीय मंच	2	–	2
समाजबादी प्रजातान्त्रिक जनता पार्टी नेपाल	1	–	1
दलित जनजाति पार्टी	1	–	1
नेपाल परिवार दल	1	–	1
नेपाल राष्ट्रीय पार्टी	1	–	1
नेपाल लोकतान्त्रिक समाजबादी पार्टी	1	–	1
छूने भावर राष्ट्रीय एकता पार्टी नेपाल	1	–	1
स्वतन्त्र	2	2	–
कुल	575	240	335

संविधान सभा में कुल 601 सीटें होंगी। शेष 26 सीटें केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल द्वारा मनोनीत लोगों से भरी जायेंगी।

(पेज 8 से आगे)

के निर्णय का विरोध किया था। उसका स्टैण्ड था कि पहले राजनीतिक-वैचारिक संघर्ष तेज करना चाहिए और जनान्दोलन को आगे बढ़ाना चाहिए। इसके बाद जनयुद्ध की स्थितियाँ बन सकती हैं। नेकपा (माओवादी) द्वारा जनयुद्ध शुरू कर देने के बाद एकता केन्द्र ने उनके साथ निरन्तर बातचीत और मित्रतापूर्ण आलोचना का क्रम जारी रखा और राजकीय दमन से जनयुद्ध तथा पार्टी की हिफ ाज़त के लिए भी सक्रिय रहे। 2001 में एकता केन्द्र ने यह मूल्यांकन प्रस्तुत किया कि जनयुद्ध द्वारा केन्द्रीय सत्ता पर कब्जा करने की सम्भावना नहीं है लेकिन इसने प्रतिक्रियावादी राज्य को कमजोर किया है और प्रतिक्रियावादी शक्तियों के आपसी अन्तरविरोध को तीखा कर दिया है। इसने जनता की आकांक्षाओं को स्वर दिया है और सकारात्मक बदलाव की स्थिति तैयार की है। दूसरी ओर साम्राज्यवादी ताक़तें, भारतीय शासक वर्ग, राजशाही समर्थक शक्तियाँ और नेपाली कांग्रेस तो माओवादियों को खत्म कर देने की कोशिश में लगी ही थीं, एमाले जैसी छद्म वाम शक्तियाँ भी माओवादियों के खत्म हो जाने का इन्तज़ार कर रही

थीं, यहाँ तक कि उनके दमन में सहयोग भी कर रही थीं। ऐसे में एकता केन्द्र ने कहा कि जनयुद्ध से बनी स्थिति का प्रयोग करके समाज को आगे ले जाने का रास्ता निकाला जाना चाहिए। इसी के बाद उसने प्रमुख वामपन्थी शक्तियों की बैठक आयोजित की और वार्ता शुरू करने का प्रस्ताव किया। उसने कहा कि यह वार्ता केवल नेपाल सरकार से ही नहीं बल्कि जनता और माओवादियों के बीच वार्ता में तब्दील की जा सकती है जिससे उन्हें अपने एजेण्डा को जनसाधारण के बीच ले जाने का अवसर मिलेगा। वार्ताओं के दौरान भी एकता केन्द्र की माओवादी नेतृत्व के साथ लगातार बातचीत चलती रही। इस दौरान एकता केन्द्र ने रणकौशलात्मक नारे के रूप में संविधान सभा और गणतन्त्र के नारे को आगे बढ़ाया। नेकपा (माओवादी) ने गणतन्त्र के संस्थागत विकास का नारा दिया। एकता केन्द्र ने यह बात उठायी कि राजनीतिक प्रणाली कैसी हो इसका फैसला खुद जनता करे। इसके लिए उन्होंने संविधान सभा, अन्तरिम सरकार और गणतन्त्र की माँगें रखीं। उनका तर्क था कि इस नारे से साम्राज्यवादियों और अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओं का भी मुँह बन्द किया जा सकता है। नेकपा (माओवादी) ने शुरू में यह माँग नहीं उठायी। पहले वे गणतन्त्र की ही बात करते रहे। देउबा सरकार के साथ वार्ता के तीसरे दौर में जाकर उन्होंने संविधान सभा की माँग उठायी। लेकिन फिर उन्होंने इस माँग को पूरी तरह अपना लिया और इसे नेपाली जनता की माँग बना देने में वे सफल रहे।

उन्होंने बताया कि एकता केन्द्र ने माओवादियों के बीच सैन्यवादी भटकाव तथा इसके कारण कार्यकर्ताओं की ओर से होने वाली विभिन्न गलतियों को लेकर भी लगातार आलोचना रखी जिसके बाद माओवादी नेतृत्व ने स्वीकार किया कि इन गलतियों के कारण कई बार जनता उन्हें भी दमनकारी के रूप में देखती है। उन्होंने जनता के समक्ष अपनी आत्मालोचना भी रखी जिसका अच्छा प्रभाव हुआ। अप्रैल 2006 के जनान्दोलन के बाद सात पार्टियों के गठबन्धन और वार्ताओं में माओवादियों के शामिल होने के लिए भी एकता केन्द्र के नेतृत्व ने लगातार प्रयास किया। उनका कहना था कि निरंकुश राजशाही के खिलाफ नेपाल की तीनों प्रमुख शक्तियों क्रान्तिकारी वाम, एमाले और नेपाली कांग्रेस का संयुक्त मोर्चा बनाया जाना चाहिए। बारह सूत्री समझौता सम्पन्न कराने में भी उनकी अहम भूमिका रही।

इन बुद्धिजीवियों का कहना था कि माओवादी नेतृत्व के व्यवहार में अक्सर राजनीतिक असंगति दिखायी पड़ती है। उनमें हमें तीन तरह की प्रवृत्तियाँ नज़र आती हैं क्रान्तिकारी प्रवृत्ति, दक्षिणपन्थी व्यवहारवादी (प्रैग्मेटिक) प्रवृत्ति और वाम संकीर्णतावादी जड़सूत्रवादी प्रवृत्ति। अभी क्रान्तिकारी प्रवृत्ति मुख्य है, लेकिन दक्षिणपन्थी व्यवहारवादी प्रवृत्ति हावी न हो जाये इसके लिए लगातार सतर्कता बरतनी होगी। उन्होंने माओवादी नेतृत्व की यह आलोचना भी रखी कि बहुत से मुद्दों पर विचारधारा और राजनीति के बजाय वे कूटनीति को मुख्य बना देते हैं। विचारधारात्मक प्रश्नों को 'टैक्टिक्स' के दायरे में नहीं लाया जाना चाहिए।

इसके बाद हमारी मुलाकात 'शान्ति एवं द्वन्द्व व्यवस्थापन समिति' के सह-संयोजक और नेपाल के सम्मानित राजनीतिक अधिकार कार्यकर्ता पद्मरत्न तुलाधर से हुई। इस समिति का गठन नेपाल सरकार के तत्वावधान में किया गया था और शान्ति-प्रक्रिया को लागू कराने में इसकी भी अहम भूमिका रही है। श्री तुलाधर ने बताया कि वे सभी पार्टियों को इस बात पर राज़ी करने की कोशिश करते रहे हैं कि गणतन्त्र के सवाल पर उन्हें साझा मंच पर चुनाव लड़ना चाहिए लेकिन ऐसा होना व्यावहारिक नहीं था। उन्होंने कहा कि नेपाल में एक असाधारण प्रक्रिया घटित हो रही है और इसमें यदि किसी भी पक्ष से गड़बड़ हुई तो लोकतन्त्र की स्थापना को भारी धक्का लगेगा। दुनियाभर से हज़ारों की संख्या में आये हुए पर्यवेक्षक तो इस इन्तज़ार में ही हैं कि कोई गड़बड़ी हो तो इस चुनाव की निष्पक्षता पर सवाल उठा दिया जाये। उन्होंने स्पष्ट कहा कि पूरे चुनाव के दौरान सबसे अधिक दबाव माओवादियों पर रहा है लेकिन इसके बावजूद उन्होंने पूरे संयम का परिचय दिया है और शान्ति बनाये रखने में उनकी सबसे बड़ी भूमिका रही है। उनके खिलाफ बार-बार नियमों के उल्लंघन के आरोप लगाये जाते रहे हैं जबकि अधिकांश मामलों में ये झूठे साबित हुए हैं। उदाहरण के लिए, यह कहा गया कि जनमुक्ति सेना (पी.एल.ए.) के लोग बैरकों से हथियार सहित निकल कर बाहर जा रहे हैं। नेपाल में संयुक्त राष्ट्र के मिशन (अनमिन) जिसकी देखरेख में पी.एल.ए. के सैनिक बैरकों में रखे गए हैं, ने स्पष्ट किया कि ऐसी कोई घटना नहीं हुई है। दूसरी तरफ, अनमिन के प्रमुख इयान मार्टिन ने बयान दिया कि पी.एल.ए. के लोग करार का पालन नहीं कर रहे हैं। करार में यह स्पष्ट था कि अपने नेताओं की हिफाज़त के लिए पी.एल.ए. के लोगों को हथियार रखने की इजाज़त होगी। फिर भी, प्रचण्ड की सुरक्षा में बहुत अधिक लोग होने का विवाद खड़ा किया गया। "मैंने स्पष्ट कहा कि इस समय नेपाल में सबसे अधिक सुरक्षा की ज़रूरत प्रचण्ड को है क्योंकि यदि उन्हें कुछ हुआ तो पूरी चुनाव प्रक्रिया ख़तरे में पड़ जाएगी।" श्री तुलाधर ने कहा कि चुनाव में माओवादियों द्वारा गड़बड़ी किये जाने को लेकर दुनियाभर में शोर मचाया गया, इसलिए हमने अन्तरराष्ट्रीय पर्यवेक्षकों को आमंत्रित किया है ताकि वे देख सकें कि चुनाव स्वतन्त्र और निष्पक्ष ढंग से हो रहे हैं। एक सवाल के जवाब में उन्होंने स्वीकार किया कि खुद पर्यवेक्षकों की निष्पक्षता को लेकर भी बहस चल रही है लेकिन हमें यकीन है कि चुनाव को लेकर उन्हें कोई सवाल उठाने का मौका नहीं मिलेगा।

इसके बाद हम नेकपा (माओवादी) की केन्द्रीय कमेटी की सदस्य और नेपाल सरकार में मन्त्री हिसिला यामी से मिलने गये। काठमाण्डो-3 चुनाव क्षेत्र में स्थित उनके चुनाव कार्यालय में गहमागहमी का माहौल था। बड़ी संख्या में युवक-युवतियाँ चुनाव की तैयारियों में लगे हुए थे। चुनाव के ऐन एक दिन पहले की व्यस्तता और थकान के बावजूद हिसिला ने तत्काल हमसे बातचीत के लिए समय निकाला, हालाँकि उनकी व्यस्तता को देखते हुए हमने बातचीत को संक्षिप्त ही रखा।

हिसिला ने कहा कि जिस वक़्त हमने जनयुद्ध शुरू किया था उस वक़्त हमें ऐसा लग रहा था कि हम नवजनवाद हासिल करके रहेंगे और फिर नवजनवाद से समाजवाद की ओर आगे बढ़ेंगे। लेकिन जैसे-जैसे जनयुद्ध आगे बढ़ा हमें यह लगने लगा कि नेपाल की विशेष परिस्थितियों में क्रान्ति का रास्ता बिल्कुल सीधा नहीं होगा। हमें यह समझ में आया कि केन्द्रीय सत्ता के लिए हमारी लड़ाई सिर्फ राजतन्त्र से नहीं है बल्कि हमें भारतीय विस्तारवाद और साम्राज्यवाद से भी टकराना होगा। अगर हम लगातार युद्ध को आगे बढ़ाते रहे, तो बाहरी शक्तियाँ हस्तक्षेप करेंगी और पूरा अन्तरराष्ट्रीय समुदाय बस तमाशबीन बना रहेगा। इसलिए हमें एक संक्रमणकालीन दौर से गुज़रना होगा। हमें संघर्ष-समझौता-संघर्ष के रास्ते से आगे बढ़ना होगा। हमने पहले राजनीतिक पहल की, फिर सैन्य पहल की, और नयी परिस्थितियों में फिर से एक राजनीतिक पहल की है। हम इस दौर की उपलब्धियों को सुदृढ़ करने के बाद क्रान्ति को अगली मंज़िल में ले जाने के लिए संघर्ष जारी रखेंगे।

चुनाव परिणामों के आकलन के बारे में पूछे जाने पर उन्होंने कहा कि अगर एमाले बाहरी ताक़तों के दबाव में आकर मोर्चा बनाने से इन्कार नहीं करती, तो वाम शक्तियों को तीन-चौथाई से भी अधिक सीटों पर जीत मिलती। अगर पूर्ण निष्पक्षता के साथ चुनाव हुआ तो हम निर्णायक बहुमत हासिल करेंगे। पहले हमें लगता था कि हम पचहत्तर प्रतिशत तक सीटें जीत लेंगे लेकिन धीरे-धीरे ज़मीनी सच्चाइयों का एहसास हुआ। यह समझ में आया कि पुरानी संरचनाओं को तोड़ना इतना आसान नहीं है। इसलिए थोड़ी अनिश्चितता है लेकिन इतना तो तय है कि निर्णायक बहुमत में आयेंगे। अगर हमारी हार होती है तो हम पराजय स्वीकार करेंगे लेकिन चुप नहीं बैठेंगे। हमारा एजेण्डा अब जनता का एजेण्डा बन चुका है, हमारा हारना जनता का हारना होगा। हम लोगों के बीच जायेंगे और जिन मुद्दों को हमने उठाया था उन्हें लेकर संघर्ष करेंगे।

हमने उनसे पूछा कि अगर उनकी पार्टी को सफलता मिलती है और लोक जनवादी क्रान्ति के कार्यभारों को पूरा करने की दिशा में प्रगति होती है तो वहाँ से आगे, समाजवाद की दिशा में बढ़ने के बारे में वे क्या सोचती हैं। इस पर उनका कहना था कि सत्ता में आने के बाद पहला कार्यभार होगा उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं, जनजातियों, महिलाओं सहित नेपाल की आम जनता की आकांक्षाओं और बुनियादी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए कदम उठाना। सबके लिए स्वास्थ्य, शिक्षा, रोज़गार जैसे सवालों को हल करना। नेपाल का आर्थिक विकास करना। इन मोर्चों पर क्रान्ति की उपलब्धियों को सुदृढ़ करने के बाद हम आगे की राह तय करेंगे।

सुबह से ही विभिन्न मुलाकातों के दौरान हमारे साथ मैरी डेशेन भी मौजूद थीं। मैरी कनाडा की रहने वाली हैं और मूलतः नृतत्वशास्त्री हैं। करीब दो दशक पहले वे नेपाल की गुरुंग जनजाति के बारे में शोध के सिलसिले में नेपाल आयी थीं। अपने शोध के लिए वे करीब डेढ़ साल नेपाल के सुदूर पहाड़ी अंचल में रहीं और उसके बाद से उनका अधिकांश समय नेपाल में ही बीतता रहा है। वे बिल्कुल सहजता से नेपाली बोलती हैं और नेपाल के क्रान्तिकारी आन्दोलन के साथ भी हमदर्दी रखती हैं। अमेरिका और कनाडा के कुछ प्रगतिशील रेडियो स्टेशनों और वैकल्पिक मीडिया के लिए वे नेपाल के आन्दोलन के बारे में रिपोर्टिंग भी करती हैं। उनसे भी नेपाल की राजनीतिक परिस्थिति को समझने में बहुत मदद मिली। मैरी के साथ ही हम उनके दोस्तों

नृतत्वशास्त्री और स्वतन्त्र पत्रकार स्टीफन माइकसेल तथा स्वतन्त्र फोटो पत्रकार उषा तिवारी से भी मिले। उषा खुद को नेपाल के क्रान्तिकारी आन्दोलन की "स्व-नियुक्त फोटोग्राफर" बताती हैं। वे काठमाण्डो में एक 'सड़क लाइब्रेरी' भी चलाती हैं। इन सबका यही कहना था कि नेपाल के आम लोग नये नेपाल के पक्ष में हैं और किसी भी कीमत पर राजशाही का ख़ात्मा चाहते हैं।

मतदान के ऐन एक दिन पहले की शाम को काठमाण्डो में जल्दी ही सन्नाटा-सा हो गया था। दिन में शहर के एक अस्पताल में एक छोटा-सा बम विस्फोट भी हुआ था लेकिन उससे किसी तरह का डर का माहौल नहीं पैदा हुआ। फिर भी, माहौल में एक आंशका बनी हुई थी। हम लोग अपनी योजना के अनुसार काठमाण्डो की कुछ गरीब बस्तियों में जाकर लोगों से मिलना-जुलना चाहते थे, लेकिन हमें सलाह दी गयी कि इस माहौल में अँधेरा होने के बाद दूर जाना ठीक नहीं होगा। इसलिए, हम लोग होटल के आसपास के इलाके में छोटी-छोटी दुकानों, ढाबों आदि में बैठे लोगों से मिलते-जुलते रहे। काठमाण्डो

(पेज 10 पर जारी)

असमानतापूर्ण सन्धियों की समीक्षा नेपाली जनता की जायज़ माँग है

नेकपा (माओवादी) द्वारा भारत के साथ हुई असमानतापूर्ण सन्धियों की समीक्षा की बात करते ही भारतीय मीडिया इस तरह शोर मचाने लगता है जैसे वे कोई भारत-विरोधी काम करने जा रहे हैं। अक्सर इन खबरों की भाषा से ऐसा लगता है जैसे सन्धियों की समीक्षा करके वे भारत के साथ एहसानफरामोशी कर रहे हैं। हर स्वतन्त्र और सम्प्रभु देश को अपने राष्ट्रीय हितों के अनुसार और बदली हुई परिस्थितियों के अनुसार विदेशी सन्धियों की समीक्षा करने का पूरा अधिकार होता है। अगर नेपाल की नयी सरकार ऐसा करती है तो इसमें क्या गलत है।

1950 की भारत-नेपाल मैत्री सन्धि, महाकाली सन्धि और सुगौली सन्धि सहित औपनिवेशिक काल में हुई अनेक सन्धियों की असमानतापूर्ण शर्तों को खत्म करने की माँग नेपाली जनता की बहुत पुरानी माँग है। 1950 की सन्धि जिस नेपाल सरकार ने की थी वह नेपाल की व्यापक जनता का प्रतिनिधित्व नहीं करती थी। उस सन्धि में कई ऐसी शर्तें हैं जिन्हें नेपाली जनता अपनी राष्ट्रीय सम्प्रभुता के खिलाफ मानती है। महाकाली सन्धि में नदी जल और बिजली के बँटवारे में नेपाल के साथ 1920 से ही घोर असमानतापूर्ण व्यवहार होता रहा है। रोजगार के लिए दोनों देशों के नागरिकों के मुक्त रूप से आने-जाने पर नेपाल को भी आपत्ति नहीं होगी लेकिन अगर वे दोनों देशों के बीच खुली सीमा के विनियमन की बात करते हैं तो इसमें भला भारत को आपत्ति क्यों होनी चाहिए? सीमा के आरपार भारी पैमाने पर तस्करी से नेपाल को गम्भीर आर्थिक क्षति होती है जो उसके जैसी कमजोर अर्थव्यवस्था पर बहुत भारी पड़ती है।

ब्रिटिशकालीन अनेक ऐसी सन्धियाँ हैं जिनके जरिये नेपाल का बहुत सा भूभाग भारत में मिला लिया गया था और एक शताब्दी से भी अधिक समय से वह भारत का हिस्सा है और वहाँ भारतीय जनता रह रही है। इस स्थिति को वापस पलटना अब सम्भव नहीं है। नेपाली क्रान्तिकारी भी इन सभी सन्धियों को रद्द करने की नहीं बल्कि उनके असमानतापूर्ण प्रावधानों को बदलने की बात कर रहे हैं। टुच्चे बुर्जुआ नेता इन मुद्दों पर भड़काऊ बयानबाज़ी करते रहते हैं लेकिन जनता को इसे अन्धराष्ट्रवादी नजरिये से नहीं देखना चाहिए। यह नेपाली जनता की एक जायज़ माँग है जिसे समझना और सम्मान दिया जाना चाहिए।

नेकपा (माओवादी) की जीत नेपाली जनता की जीत है

(पेज 9 से आगे)

के एक दैनिक के संवाददाता बुद्धिसागर तथा स्वतन्त्र पत्रकार एवं कवि विप्लव प्रतीक से भी हमारी बातचीत हुई।

दस अप्रैल को मतदान के दिन हम लोग सुबह ही काठमाण्डो घाटी के विभिन्न मतदान स्थलों का दौरा करने निकल पड़े। हमारे साथ आनन्द स्वरूप वर्मा और प्रमोद काफले भी थे। सबसे पहले हम काठमाण्डो-10 निर्वाचन क्षेत्र में गये जहाँ से नेकपा (माओवादी) के अध्यक्ष प्रचण्ड चुनाव लड़ रहे थे। इस इलाके का बड़ा हिस्सा ग्रामीण क्षेत्र है और त्रिभुवन विश्वविद्यालय का विशाल कैम्पस भी इसी में आता है। जलविनायक चौभार के मतदान केन्द्र पर जिस वक्त हम पहुँचे तो पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति जिमी कार्टर की अगुवाई में पर्यवेक्षकों का एक काफिला रवाना हो रहा था और यूरोपीय यूनियन के पर्यवेक्षकों का दूसरा दल पहुँचा हुआ था। मतदान स्थल पर वोट देने के लिए सुबह से ही लम्बी लाइनें लगी हुई थीं जिनमें बड़ी संख्या में महिलाएँ थीं। आँकड़ों के अनुसार पूरे नेपाल में मतदान करने वालों में पचास प्रतिशत से अधिक महिलाओं की संख्या रही। कहीं भी किसी तरह का तनाव नज़र नहीं आ रहा था। यंग कम्युनिस्ट लीग के नौजवान मतदान स्थल से दूर बैठे थे और उनमें से एक नौजवान अनीश ने मुस्तैदी से हमें मतदान स्थल का दौरा कराया। एक नौजवान से हमने पूछा कि क्या वह वाईसीएल का सदस्य है तो उसने कहा कि यहाँ तो हर घर में वाईसीएल मौजूद है। यहाँ पर मतदान के लिए जुटी ग्रामीण महिलाओं ने खुलकर कहा कि उन्होंने प्रचण्ड को वोट दिया है। पूछने पर वे बोलीं कि नेकपा (माओवादी) ने महिलाओं को पूरी बराबरी का दर्जा दिया है। महिलाएँ फ़ौज में बन्दूक उठाकर लड़ती हैं क्या यह उन्हें ठीक लगता है, यह पूछने पर महिलाओं ने हँसकर कहा कि हाँ, अच्छा लगता है।

इसके बाद हम प्रचण्ड के चुनाव क्षेत्र में चालनाखेल गाँव से होते हुए सेतीदेवी नाम के बड़े गाँव में पहुँचे। यहाँ काफी चहल-पहल थी और नेपाली कांग्रेस के कार्यकर्ता और झण्डे ज़्यादा दिखाई दे रहे थे, लेकिन आम लोगों से बात करने पर ऐसा लगा कि नेकपा (माओवादी) के प्रति उनमें रुझान है। भले ही गाँव के सम्पन्न लोगों, जो कि अधिकतर नेपाली कांग्रेस के समर्थक थे, की मौजूदगी में वे साफ-साफ कुछ कहने से हिचक रहे हैं। हमने एमाले के महासचिव माधव कुमार नेपाल के चुनाव क्षेत्र काठमाण्डो-2 और काठमाण्डो-4 के कुछ मतदान केन्द्रों का भी दौरा किया। काठमाण्डो-2 के कोटेश्वर महादेव स्थित मतदान केन्द्र पर भारी भीड़ थी। इस जगह हमने बहुत से लोगों से बातचीत की और एकाध को छोड़कर सभी ने अपने आपको एमाले का समर्थक बताया। यह माधव कुमार नेपाल का चुनाव क्षेत्र ही नहीं था वे इसी क्षेत्र में रहते भी हैं। फिर भी झक्कू प्रसाद सुबेदी नामक नेकपा (माओवादी) के एक अनाम से और काठमाण्डो के बाहर से आये प्रत्याशी ने उन्हें करारी शिकस्त दी। यहाँ कुछ लड़कियों ने बातचीत में कहा कि बहुत से लोग माओवादियों को वोट देंगे पर वे खुलकर यह बात नहीं कहेंगे क्योंकि उन्हें डर है कि अगर माओवादी नहीं जीते तो उन्हें नुकसान उठाना पड़ेगा।

मतदान के अगले दिन नेकपा (एकता केन्द्र) के नेतृत्व के कुछ साथियों से हमारी लम्बी बातचीत हुई। उन्होंने कहा कि नेकपा (माओवादी) के साथ एकता की प्रक्रिया अब फिर से आगे बढ़ेगी। उनका कहना था कि चुनाव के बाद संविधान सभा के भीतर और बाहर वाम शक्तियों को मिलकर काम करना होगा। संविधान का स्वरूप क्या हो, इस पर भी एकता केन्द्र ने क्रान्तिकारी शक्तियों के साथ बातचीत शुरू कर दी है। आज की स्थिति में शक्ति सन्तुलन को देखते हुए नवजनवादी संविधान का निर्माण सम्भव नहीं है। दूसरी ओर यथास्थितिवादी शक्तियों की ओर से पारम्परिक गणतन्त्र लाने का षड्यन्त्र हो रहा है। हम चाहते हैं कि अधिकाधिक जनोन्मुख उन्नत जनवादी गणतन्त्र स्थापित किया जाये। नये संविधान में तीन बातों पर जोर होना चाहिए। पहला है, राष्ट्रीय सम्प्रभुता का प्रश्न जिसके लिए जरूरी है कि असमान सन्धियों को खत्म किया जाये। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि नये संविधान को राजनीतिक अधिकारों के साथ ही आर्थिक जनवाद भी स्थापित करना चाहिए। तीसरा पक्ष है राज्य और समाज का इस प्रकार पुनर्गठन जिसमें आम मेहनतकश जनता की प्रमुख भूमिका हो। यह काम आसान नहीं है। हम ऐसा कर पाते हैं या नहीं यह इस बात पर निर्भर करेगा कि सर्वहारा क्रान्तिकारी कितनी वैचारिक दृढ़ता और सूझबूझ से काम करते हैं और संयुक्त मोर्चे की नीति को कितनी कुशलता के साथ लागू करते हैं।

●

संविधान सभा में कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों का सबसे बड़ी ताकत बनकर उभरना नेपाली जनता की एक ऐतिहासिक जीत है। नेपाल की जनवादी क्रान्ति की जारी प्रक्रिया का यह एक महत्त्वपूर्ण मुकाम है। अब यहाँ से आगे चुनौतियों का एक नया दौर शुरू होगा। अनेक राष्ट्रीयताओं-उप राष्ट्रीयताओं की अपेक्षाओं को उन्हें पूरा करना है, जिनके बीच आपसी टकराव भी हैं। नया नेतृत्व उन्हें किस प्रकार हल करता है इस पर बहुत कुछ निर्भर करेगा। मधेश का सवाल एक बेहद जटिल सवाल बना हुआ है। राजा समर्थक प्रतिक्रियावादी ताक़तें कुछ तो सेना और नौकरशाही में हैं, लेकिन इनका बड़ा आधार कुलीन भूस्वामियों के बीच है। भूमि सुधार को हाथ में लेते ही इनके साथ सीधा टकराव होगा और वर्ग संघर्ष उन्नत धरातल पर पहुँच जायेगा। नेपाल की राष्ट्रीय सम्प्रभुता का विस्तार करने, विश्व बैंक सहित तमाम साम्राज्यवादी वित्तीय एजेंसियों की जकड़बन्दी तोड़ने तथा राज्य व्यवस्था और समाज का इस प्रकार पुनर्गठन करने का एजेण्डा उनके सामने है जिसमें जनता की भागीदारी बढ़े और नौकरशाही का दखल कम-से-कम होता जाये। देखना होगा कि नेकपा (माओवादी) महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति की शिक्षाओं को नेपाल के सन्दर्भ में किस प्रकार लागू करती है। उन्हें क्रमशः क्रान्ति की उपलब्धियों को सुदृढ़ करते हुए आगे बढ़ना होगा।

संविधान सभा में स्पष्ट बहुमत नहीं मिलने से सरकार के गठन और सरकार चलाने में उनकी निर्भरता बनी रहेगी। इसके साथ ही, संविधान निर्माण के अधिकांश मुद्दों पर आवश्यक दो-तिहाई बहुमत नहीं होने से भी उनके हाथ कुछ बँधे हुए हैं। प्रतिक्रियावादी ताक़तें तो अभी से शरारतों और सौदेबाजी और तोड़फोड़ के कामों में लग चुकी हैं। गिरिजाप्रसाद कोईराला को प्रधानमन्त्री बनाये रखने के लिए पुराने संविधान के दाँव-पेंचों का इस्तेमाल किया जा रहा है। हालाँकि, अब खुद उनकी पार्टी में ही उनके खिलाफ आवाज उठने लगी है। एमाले ने भी अड़ंगेबाजी शुरू कर दी है। पी.एल.ए. को राष्ट्रीय सेना में मिलाने पर पहले आम सहमति बन चुकी थी लेकिन अब एमाले की ओर से शर्त लगायी जा रही है कि पी.एल.ए. और वाई.सी.एल. को भंग करने पर ही ने.क.पा. (माओवादी) को सरकार बनाने का मौका मिलना चाहिए।

ने.क.पा. (माओवादी) के पक्ष में सबसे बड़ी बात यह है कि क्रान्तिकारी वाम की शक्तियाँ मुख्य माँगों पर उनके साथ हैं। व्यापक जन-भावना उनके द्वारा उठाये गये मुद्दों के पक्ष में है और अब उसमें अड़ंगे डालने वाला जनता की निगाह में और नीचे गिर जायेगा। यदि किसी प्रतिक्रान्तिकारी तख्तापलट के जरिये प्रतिक्रियावादी ताकतें कुछ समय के लिए सत्ता में आ भी जायें तो वे टिक नहीं सकेंगी। ने.क.पा. (माओवादी) का एजेण्डा अब जनता का एजेण्डा बन चुका है, इस एजेण्डा में जो भी जोड़-तोड़ करेगा वह लोगों की नजरों में नंगा हो जायेगा और इतिहास की कचरापेटी में फेंक दिया जायेगा। यही बात नेपाल के क्रान्तिकारी आन्दोलन के लिए एक तरह के सुरक्षा-कवच का काम कर रही है।

एमाले जैसी संशोधनवादी पार्टियाँ इसलिए भी बौखलायी हुई हैं क्योंकि उनकी कतारों में बिखराव बढ़ रहा है। रैडिकल कतारों का एक बड़ा हिस्सा ने.क.पा. (माओवादी) के करीब आ रहा है। चुनावों के दौरान एमाले के कई हजार कार्यकर्ता ने.क.पा. (माओवादी) के साथ आ गये। कुछ जगहों पर तो एमाले के उम्मीदवार ही माओवादी उम्मीदवार के पक्ष में हट गये। इसी बौखलाहट में एमाले नेता वाई.सी.एल. को भंग करने की माँग कर रहे हैं। जबकि वाई.सी.एल. एक संगठित युवा शक्ति है जो क्रान्ति के एजेण्डा को आगे बढ़ा रही है। नेपाली कांग्रेस के भी कुछ रैडिकल और राष्ट्रवादी हिस्से ने.क.पा. (माओवादी) के पक्ष में हैं। इन पार्टियों की कतारों में बिखराव हो रहा है और नेताओं के आपसी अन्तर्विरोध तीखे हो रहे हैं। ये स्थितियाँ क्रान्तिकारी वाम के पक्ष में हैं।

बेशक, नेपाली क्रान्ति बीसवीं सदी की क्रान्ति है जो इक्कीसवीं सदी में हो रही है। नेपाल दुनिया के उन थोड़े से पिछड़े देशों में से एक है, जहाँ बहुत कम औद्योगिक विकास हुआ है और जहाँ प्राक्-पूँजीवादी भूमि सम्बन्ध मुख्यतः मौजूद हैं। वहाँ साम्राज्यवाद-सामन्तवाद विरोधी (राष्ट्रीय जनवादी क्रान्ति) को अंजाम दिया जा रहा है। आज अफ्रीका और सब-सहारा के कुछ बेदह पिछड़े, छोटे देशों को छोड़कर एशिया-अफ्रीका- लातिन अमेरिका के अधिकांश देश इस दौर को पार कर चुके हैं। इन महाद्वीपों के अधिकांश देश आज, पिछड़े हुए ही सही, लेकिन पूँजीवादी देश बन चुके हैं। यहाँ की व्यापक जनता को भूमण्डलीकरण के वर्तमान दौर में, साम्राज्यवाद और अपने देश के सत्तारूढ़ पूँजीपतियों के विरुद्ध एक नये प्रकार की समाजवादी क्रान्ति करनी है। इस दृष्टि से देखें तो नेपाल की क्रान्ति एक प्रवृत्तिनिर्धारक 'ट्रेंड सेटर' क्रान्ति नहीं है। लेकिन हर क्रान्ति अपने सकारात्मक-नकारात्मक अनुभवों से दुनिया के क्रान्तिकारियों को बहुत कुछ सिखाती है। नेपाल में एक दशक तक चले दुर्द्धर्ष जनयुद्ध के दौरान अपने देश की परिस्थितियों के हिसाब से मौलिक प्रयोग करते हुए नेपाली क्रान्ति इस मुकाम तक पहुँची है। साम्राज्यवाद और भारत सरकार की भरपूर मदद के बावजूद नेपाली शासक वर्ग उसे कुचलने में नाकाम रहा। पूरी दुनिया की संघर्षरत जनता के लिए इसका बहुत अधिक महत्त्व है। यह एक ऐसे समय में सम्पन्न हो रही है जब दुनिया में क्रान्ति की लहर पर प्रतिक्रान्ति की लहर हावी है। इसीलिए नेपाली क्रान्तिकारियों के सामने चुनौतियाँ भी बहुत कठिन हो जाती हैं। अब देखना यह होगा कि वे इन राजनीतिक और विचारधारात्मक चुनौतियों से कैसे जूझते हैं।

सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व में बहु-पार्टी प्रतिस्पर्द्धा की बात तो समझ में आती है लेकिन बहु-पार्टी जनवाद के सवाल पर ने.क.पा. (माओवादी) की सोच क्लासिकी लेनिनवादी सोच से अलग है और कुछ प्रश्न खड़े करती है। कुछ और भी विचारधारात्मक प्रश्नों पर उनका रुख चिन्ता पैदा करता है। लेकिन सकारात्मक बात यह है कि यह वर्ग संघर्ष को नेतृत्व देने वाली पार्टी है। इसका एक दशक का इतिहास लगातार गलतियों से सीखने और सुधार करने का इतिहास रहा है। संघर्ष करने वाली पार्टी अगर जनता और संघर्षों के बीच रहती है तो अपनी गलतियों को ठीक कर सकती है। एक और आश्वस्त करने वाली बात यह है कि क्रान्तिकारी वाम में ने.क.पा. (माओवादी) के अलावा और भी शक्तियाँ हैं जो सकारात्मक आलोचना और वैचारिक संघर्ष के जरिये उनकी मदद करती रही हैं। इनमें प्रमुख है ने.क.पा. (एकता केन्द्र) जिसका अधिकतर प्रश्नों पर सही अवस्थिति अपनाने का इतिहास रहा है। चुनावों के पहले से ही दोनों के बीच एकता की प्रक्रिया जारी है और व्यवहारतः अब दोनों की अवस्थितियों में ज्यादा अन्तर नहीं रह गया है। इन दोनों क्रान्तिकारी वाम शक्तियों की आसन्न एकता नेपाली क्रान्ति के लिए एक शुभ संकेत है। इससे नेपाली क्रान्ति को महत्त्वपूर्ण अग्रगति प्राप्त होगी।

जैसा कि हमने ऊपर कहा है यह राष्ट्रीय जनवादी क्रान्ति तो है लेकिन अतीत की जनवादी क्रान्तियों की कार्बन कॉपी नहीं है। बदली परिस्थितियों में मार्ग का सन्धान करते हुए यह यहाँ तक पहुँची है और इस क्रान्ति की प्रक्रिया अभी जारी है। संविधान सभा का चुनाव नेपाल के लिए एक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक मुकाम है। इसके साथ ही वर्ग संघर्ष वहाँ एक नये धरातल पर पहुँच गया है जिसकी अभिव्यक्ति संविधान सभा की कार्य-प्रणाली और प्रक्रिया में भी होगी।

●

नेपाली क्रान्ति से बौखलाये भारत के प्रतिक्रियावादियों का विषवमन जारी

भारत का मुख्य शासक वर्ग नयी स्थिति को समझ रहा है और पैंतरापलट करके नेपाल के नये शासकों के साथ तार जोड़ने की कोशिश में लगा है। लेकिन कई ऐसी भी प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ हैं जो लगातार नेपाली क्रान्ति के विरुद्ध जहर उगलने और षड्यन्त्रों में लगी हुई हैं। नेपाल के सीमावर्ती पूर्वी उत्तर प्रदेश के जिलों में भाजपा सांसद योगी आदित्यनाथ 'हिन्दवी' नाम के अपने अखबार और अपनी फासिस्ट किस्म की गुण्डावाहिनी के जरिये लगातार नेपाली क्रान्ति के खिलाफ सक्रिय हैं। वे इस किस्म की बयानबाजी करते रहे हैं कि एकमात्र हिन्दू राष्ट्र की रक्षा के लिए हिन्दुओं को माओवादियों के खिलाफ एकजुट हो जाना चाहिए। पिछले दिनों नेपाल सीमा के निकट तुलसीपुर में विश्व हिन्दू परिषद की ओर से दो दिन का सम्मेलन इसी मुद्दे पर किया गया जिसमें योगी के अलावा विहिप के अध्यक्ष अशोक सिंघल और नेपाल के पूर्व सेना प्रमुख तथा विश्व हिन्दू महासंघ के अध्यक्ष भरत केशर सिंह ने घोर भड़काऊ किस्म के भाषण दिये। अगर भारत सरकार वास्तव में अपनी मंशा में स्पष्ट है तो उसे इस किस्म की बयानबाजी पर रोक लगानी चाहिए लेकिन यह तय ही है कि वह ऐसा नहीं करेगी। तराई के जिलों में सक्रिय प्रतिक्रियावादी शक्तियों के साथ उनका गँठजोड़ किसी से छिपा नहीं है। नेपाल की राजतन्त्र समर्थक और भारत की साम्प्रदायिक प्रतिक्रियावादी शक्तियों के इस गँठजोड़ के पीछे आर्थिक हित भी हैं। तराई क्षेत्र में बड़े पैमाने पर गोरखनाथ मठ की सम्पत्तियाँ मौजूद हैं जिन्हें बचाने की चिन्ता भी उन्हें सता रही है।

उधर चुनाव के ऐन बाद पूर्वी उत्तर प्रदेश के एक सपा सांसद ने बयान दिया कि यदि भारत सरकार ने लापरवाही नहीं बरती होती तो माओवादी सत्ता में नहीं आ पाते। पूरी दुनिया से आये हजारों पर्यवेक्षकों की मौजूदगी में हुए चुनावों में नेपाली जनता ने व्यापक समर्थन से जिन्हें चुना है उनके बारे में इस किस्म की टिप्पणी का भला क्या मतलब है। सांसद महोदय के अनुसार भारत सरकार आखिर ऐसा क्या करती कि माओवादी सत्ता में न आ पाते! किसी देश के आन्तरिक मामलों में सीधे हस्तक्षेप के अलावा इस बात का भला और क्या मतलब हो सकता है? कितनी दिलचस्प बात है कि भाजपा और समाजवादी पार्टी के सांसद अन्धराष्ट्रवाद के मुद्दे पर सुर में सुर मिला रहे हैं।

ऐसे भड़काऊ बयानों से नेपाली क्रान्ति का कुछ बिगड़ेगा तो नहीं लेकिन इस किस्म की बातें नेपाली जनता के बीच भारत के प्रति जड़ जमाये पूर्वाग्रहों को और मज़बूत बनाने का काम ज़रूर करेंगी।

एक "नये नेपाल" के लिए : बाबूराम भट्टराई से बातचीत

बाबूराम भट्टराई नेकपा (माओवादी) के पोलित ब्यूरो की स्टैंडिंग कमेटी के वरिष्ठ सदस्य हैं। स्वतन्त्र पत्रकार स्टीफन माइकसेल और मैरी डेशेन ने 3 मई 2008 को काठमाण्डो में उनसे यह बातचीत की थी। यह पूरी बातचीत मुंबई से प्रकाशित 'इकोनॉमिक एंड पोलिटिकल वीकली' के 10 मई 2008 के अंक में प्रकाशित हुई है। इसके कुछ अंश एक स्वतन्त्र अमेरिकी रेडियो स्टेशन से 4 मई को प्रसारित हुए थे। मूलतः इसी रेडियो स्टेशन के लिए यह साक्षात्कार रिकॉर्ड किया गया था। सं.

प्रश्न : मई दिवस पर आपकी पार्टी का मज़दूरों के लिए क्या सन्देश था?

मई दिवस के ऐतिहासिक मौक़े पर मज़दूर वर्ग को हमारा सन्देश था कि हम नेपाल में बहुत ही देशी ढंग से क्रान्ति कर रहे हैं, लेकिन अभी हमें ढेरों चुनौतियों का सामना करना है। प्रतिक्रियावादी बहुत आसानी से इतिहास के रंगमंच को ख़ाली नहीं करने वाले हैं। वे ज़बरदस्त प्रतिरोध करेंगे, इसलिए हमें बेहद गम्भीरता के साथ इस चुनौती का सामना करना होगा, हमें सत्ताच्युत कर दिये गये सामन्ती और प्रतिक्रियावादी वर्गों के ज़बरदस्त प्रतिरोध का सामना करने के लिए तैयारी करनी होगी। मज़दूर वर्ग को हमने यह पहला सन्देश दिया। हमारा दूसरा सन्देश यह था कि अगर हमें एक नये नेपाल का निर्माण करना है, तो हमें एक नयी राष्ट्रीय एकता का निर्माण करने पर ध्यान केन्द्रित करना होगा। हमें शान्ति, स्थिरता और प्रगति की जरूरत है, और इसके लिए मज़दूर वर्ग को सामन्तवाद सामन्ती उत्पादन सम्बन्धों के सभी अवशेषों को दूर करने और समाजवाद की दिशा में उन्मुख औद्योगिक सम्बन्ध विकसित करने का नेतृत्व अपने हाथों में लेना होगा, जिससे मज़दूर वर्ग की दीर्घकालिक माँगों का हल निकलेगा। मई दिवस के कार्यक्रमों के दौरान हमने यही दो सन्देश दिये।

प्रश्न : इस दिशा में काम करने के लिए आप क्या व्यावहारिक क़दम उठाने वाले हैं?

पहला क़दम यह है कि, हालाँकि हम चुनाव जीत चुके हैं, लेकिन प्रतिक्रियावादी वर्ग, ख़ासकर साम्राज्यवादी, अनेकों क़िस्म के षड्यन्त्र रच रहे हैं। वे राजतन्त्रवादी शक्तियों और नौकरशाह बुर्जुआ वर्ग को, जो साम्राज्यवादियों के साथ मजबूती से नत्थी हैं, उकसाने का प्रयास कर रहे हैं। वे उन्हें माओवादियों को सत्ता नहीं सौंपने के लिए भड़का रहे हैं। इसके कारण, हमें संघर्ष की प्रक्रिया से गुज़रना पड़ सकता है जिसके लिए मज़दूर वर्ग और समस्त शोषित-उत्पीड़ित जनता को तैयार रहना चाहिए। अगर ज़रूरत हुई, तो प्रतिक्रियावादियों के इस कपटपूर्ण हमले का प्रतिरोध करने के लिए हमें सड़कों पर उतरना होगा। व्यावहारिक तौर पर, हमने उनसे तैयार रहने का आह्वान किया है। और दूसरी बात यह कि, अपने नेतृत्व में सरकार बना लेने के बाद, हमें मज़दूर वर्ग और उस ग़रीब जनता को कुछ तात्कालिक राहत देनी होगी जो लम्बे समय से कष्ट भोग रही है, और ग़रीबी, बेरोज़गारी और ग़ैर-बराबरी से पीड़ित है। शहीदों के परिवारों को राहत देनी होगी। वे ग़रीब लोग हैं। उनके बेटे-बेटियों ने अपनी जानें कुर्बान कर दी थीं इसलिए उन्हें तात्कालिक राहत की ज़रूरत होगी। इसके अलावा दूसरे लोग जो लापता हो गये थे और जो घायल हुए उन्हें भी इसकी जरूरत होगी। यह एक पहलू है। दूसरा पहलू है, वास्तविक बुनियादी ग़रीब आबादी, मेहनतकश वर्ग, जिन्हें तत्काल आर्थिक राहत की ज़रूरत है। इसलिए हम सहकारी दूकानों का एक नेटवर्क बनाकर एक सार्वजनिक वितरण प्रणाली स्थापित करने पर विचार कर रहे हैं ताकि इनके ज़रिये हम मज़दूर वर्ग और ग़रीब जनता को बुनियादी आवश्यकता की चीज़ें प्रदान कर सकें। हम इसके लिए एक निश्चित धनराशि मुहैया करना चाहते हैं। और इसके बाद, शिक्षा और स्वास्थ्य के लिए। शुरू से ही हमारी यह अवस्थिति रही है कि शिक्षा, स्वास्थ्य और रोज़गार को और साथ ही आवास और खाद्य सुरक्षा को भी जन-साधारण का मौलिक अधिकार होना चाहिए। हम अपने घोषणापत्र में इसका वचन भी दे चुके हैं। और साथ ही अन्तरिम संविधान में इसे आंशिक रूप से लिखा भी गया है। इसलिए हम इसे अमल में उतारने की कोशिश करेंगे। और इसके लिए, हमें नयी सरकार का एक नया बजट, और उपयुक्त नयी नीति बनानी होगी। मज़दूर वर्ग और आम ग़रीब आबादी को इस प्रक्रिया में अपना योगदान देना चाहिए। उन्हें हमारी पार्टी और भावी सरकार को सलाह देनी चाहिए, और सरकार को सही रास्ते पर बनाये रखने के लिए उन्हें बेहद चौकस रहना चाहिए। अगर जनसाधारण और मज़दूर वर्ग और ग़रीब लोग दबाव नहीं डालेंगे, तो सरकार सही दिशा में आगे नहीं बढ़ सकती। इस सन्दर्भ में बहुत बुरे ऐतिहासिक अनुभव रहे हैं। इसलिए, जब तक मज़दूर वर्ग बेहद चौकस नहीं हो जाता और नीचे से सरकार पर नियन्त्रण रखने की अपनी शक्ति का इस्तेमाल नहीं करता, तब तक सरकार के रास्ते से विचलित हो जाने, और चुनाव के दौरान किये गये वायदों को अमल में नहीं उतारने की सम्भावना बनी रहती है।

प्रश्न : जन-साधारण को नीचे से दबाव बनाने के साधन प्रदान करने के लिए आप क्या क़दम उठा रहे हैं?

पहली बात, हमारी पार्टी जानती है कि भले ही हम सरकार में भागीदारी कर रहे हैं, लेकिन यह सरकार पूरी तरह से एक क्रान्तिकारी सरकार नहीं बल्कि एक संक्रमणशील सरकार है। इसलिए हमें अन्य वर्गों के साथ समझौता करना होगा। लेकिन तब भी हम नेतृत्व अपने हाथ में रखना चाहेंगे। हम राज्य को अन्दर से बदलना चाहते हैं। इसके लिए हमें बाहर से दबाव बनाना होगा। इस बारे में हमारी पार्टी की अवस्थिति यह है कि पार्टी का सम्पूर्ण नेतृत्व सरकार में शामिल नहीं होगा। पार्टी नेतृत्व का एक हिस्सा सरकार में शामिल होगा, और दूसरा हिस्सा इससे बाहर रहेगा और जन-समुदाय को संगठित और लामबन्द करना जारी रखेगा। तो पार्टी का यह रास्ता होगा। हममें से बहुत-से लोग (सरकार में होंगे)। संघर्ष मुख्य रूप से नया संविधान बनाने के लिए सरकार के अन्दर से होगा। लेकिन दूसरा हिस्सा सरकार के बाहर बना रहेगा। यही वजह है कि हमारे सारे केन्द्रीय नेतृत्व ने चुनावों में हिस्सा नहीं लिया। हम जन-समुदाय को संगठित और लामबन्द करना चाहते हैं ताकि वह सरकार पर दबाव डाल सके। तो यह एक पहलू है। और हम कुछ खास संस्थाएँ विकसित करना चाहते हैं। हालाँकि हमने अभी तक उन्हें ठोस रूप नहीं दिया है, पर हमने कुछ नीतिगत फैसले लिये हैं। जब हमने 21वीं सदी में जनवाद के विकास की अवधारणा पेश की थी, तो हमारा नारा था कि सरकार और पार्टी पर जन-समुदाय की निरन्तर चौकसी रहनी चाहिए, और आवश्यक होने पर जन-समुदाय को समय-समय पर हस्तक्षेप करना चाहिए। यही हमारी नीति है। लेकिन हम इसका ठोस स्वरूप नहीं तलाश सके हैं। अगर सरकार अपने रास्ते से विचलित होती है तो हस्तक्षेप करने का क्या तरीक़ा होगा? सार्वजनिक प्रदर्शन करने के अलावा, दबाव डालने के क्या रास्ते होंगे? राजकीय तन्त्र में वे कैसे हस्तक्षेप करेंगे? हम इसकी कार्यप्रणाली तय करने की कोशिश कर रहे हैं।

प्रश्न : संविधान सभा पर निगरानी रखने के लिए जन-समुदाय के पास कौन-से तरीक़े होंगे?

हमारा तात्कालिक कार्य नया संविधान बनाना है, जिसमें वास्तविक जनसाधारण की अपना संविधान बनाने में पूरी भागीदारी हो।

प्रश्न : लेकिन अभी तो (संविधान सभा के) संगठन करने के बेहद व्यावहारिक मुद्दे तय होने हैं। अभी जनता और संविधान सभा के आपसी सम्बन्ध के समस्त रूपों का निर्धारण किया जाना है, और यह भी पक्का नहीं है कि कोई प्रभावी कार्यप्रणाली स्थापित हो ही जायेगी।

हम नियम और विधान बना सकते हैं। इस मुद्दे पर अन्तरिम संविधान बेहद खुला होगा। हम कुछ मॉडल विकसित कर सकते हैं जिनके द्वारा संविधान सभा के अन्दर बनायी जाने वाली समितियों को अलग-अलग स्थानों पर जाना होगा और सार्वजनिक बैठकें आयोजित करनी होंगी, और जन-समुदाय की राय एकत्र करनी होगी। इस प्रकार की कार्यप्रणाली विकसित करनी होगी। कम से कम हमारी पार्टी यह प्रस्ताव पेश करेगी। ... अगर ज़रूरत पड़ी तो कुछ ख़ास अनुच्छेदों पर जनमत-संग्रह भी कराया जा सकता है। यहाँ तक कि हम राजनीतिक पार्टियों के अन्दर भी एकमत बनाने की कोशिश करेंगे और इसके बाद, अगर ऐसा नहीं हो पाता है तो, हम दो-तिहाई बहुमत जुटायेंगे, और ज़रूरत पड़ने पर हम कुछ ख़ास मुद्दों को लेकर जनमत-संग्रह भी करा सकते हैं। हमारा अप्रोच निर्णयकारी प्रक्रिया में अधिकतम जनता को शामिल करना है।

प्रश्न : अपनी पार्टी की आर्थिक नीति से कोई भी समझौता किये बिना, अन्तरराष्ट्रीय पूँजी को लाने और घरेलू पूँजी को देश में बनाये रखने की चुनौती से आप कैसे निपट रहे हैं?

हमारा मुख्य ज़ोर आन्तरिक संसाधनों का इस्तेमाल करने पर होगा। अगर हम अपने आन्तरिक संसाधनों का अच्छी तरह इस्तेमाल नहीं कर पाते हैं, कम से कम बुनियादी ज़रूरतों के लिए ही सही, तो अन्तरराष्ट्रीय पूँजी हमें हमेशा ब्लैकमेल करती रहेगी। इसलिए हमारी पहली प्राथमिकता आन्तरिक संसाधनों का इस्तेमाल करने की होगी। लेकिन तब भी, तात्कालिक सन्दर्भ में, हमें कुछ विदेशी पूँजी की आवश्यकता होगी। अन्तरराष्ट्रीय पूँजी का इस्तेमाल करके, कम से कम दीर्घकालिक आर्थिक विकास के लिए हमें बुनियादी आधारभूत ढाँचे में, और इसी तरह की चीज़ों में, निवेश करना होगा। इसके लिए हम अन्तरराष्ट्रीय एजेंसियों से फिर से बातचीत करने की कोशिश कर रहे हैं। बेशक वे दबाव डालने की कोशिश तो करेंगे। लेकिन हम पहले ही उनमें से कुछ के सम्पर्क में हैं। और उनकी भी अपनी बाध्यताएँ हैं। अगर वे सहयोग नहीं करते हैं, तो उन्हें भी जनता के प्रतिरोध का सामना करना पड़ेगा। उन सभी के अपने रणनीतिक हित हैं। नेपाल चीन और भारत के बीच की बेहद रणनीतिक जगह पर स्थित है, और मेरे खयाल से भारत और चीन इन शक्तियों की नजर में बड़े बाजार हैं, और अगर नेपाल में अनुकूल स्थिति नहीं होती है, तो इससे उन्हें नुकसान पहुँचेगा तात्कालिक नहीं वरन दीर्घकालिक रणनीतिक सन्दर्भ में। इस तरह नेपाल के साथ उनके भी अपने कुछ ख़ास हित जुड़े हैं। इसलिए, अगर हम उनके साथ बेहद सावधानीपूर्वक बातचीत करें, हालाँकि वे दबाव डालने की कोशिश करेंगे हम यह जानते हैं, ग़रीब देशों और ग़रीब लोगों की बाँह मरोड़ना अन्तरराष्ट्रीय पूँजी का स्वभाव है लेकिन तब भी, मेरा खयाल है कि अगर हम बेहद सावधानीपूर्वक कदम बढ़ाएँ, तो हम उनसे कुछ छूटें हासिल कर सकते हैं।

प्रश्न : एक बार फिर श्रमिकों से जुड़े मुद्दों पर बात करें, तो आप मज़दूर वर्ग और ख़ासकर अपनी यूनियनों को देश की आर्थिक नीति में कैसे शामिल कर रहे हैं?

नेपाल में हमारी यूनियनें सबसे मजबूत हैं। हम (शान्ति) प्रक्रिया में दो साल पहले शामिल हुए। लगभग सभी कारखानों और कार्यस्थलों में, हमने मज़दूरों को संगठित किया, और हमारी ट्रेड यूनियनें देश में सबसे मजबूत हैं। जहाँ कहीं भी (यूनियनों के) चुनाव हुए, हमने लगभग सभी में जीत हासिल की। यह सुनने में कुछ अजीब लग सकता है, लेकिन मैं आपको सिर्फ एक उदाहरण बताता हूँ, पाँच सितारा होटलों में जब चुनाव हुए, तो हमें उन सभी में जीत हासिल हुई। हमारी ट्रेड यूनियनें इसलिए मजबूत बनीं क्योंकि उन्होंने कामगारों के अधिकारों के लिए प्रबन्धन के साथ मज़बूती से वार्ता की। वेतन बढ़ाने और कानून के अनुसार लाभ और सुविधाएँ देने की बात की। पहले उन्हें उचित वेतन नहीं दिया जाता था, और उन्हें कोई सुविधाएँ नहीं मिलती थीं। प्रबन्धन उन्हें वेतन देने को मजबूर हुआ। और मज़दूर हमारी ट्रेड यूनियनों की ओर बहुत आकर्षित हुए। लेकिन दूसरी ओर, प्रतिक्रियावादी प्रबन्धन को भड़का रहे हैं, वे कहते हैं कि माओवादी ट्रेड यूनियनें बेवजह दबाव डाल रही हैं, इसलिए वहाँ निवेश के लिए बिल्कुल सहायक माहौल नहीं है, और इस तरह से वे पूँजी के पलायन को प्रोत्साहित कर रहे हैं। कुछ पूँजी बाहर चली गयी है, इसलिए हमें यह करना पड़ा कि (...)।

अभी पिछले ही दिन हम राष्ट्रीय (पूँजीपतियों) और व्यापारियों की एक सभा में थे और हमने उन्हें यह समझाने की कोशिश की कि इस वक्त हमारा ध्यान मुख्य रूप से सामन्तवाद को समाप्त करने और उत्पादन के सामन्ती सम्बन्धों, और परनिर्भर पूँजीवाद का खात्मा करने पर है न कि राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय पूँजीवाद का खात्मा करने पर। इस तरह हमने इन दोनों के बीच फर्क करने की कोशिश की। पहली बात, हम सामन्तवाद का खात्मा करना चाहते हैं। इसके बाद हम अपनी उत्पादक निवेश पूँजी को विकसित करना चाहते हैं, न कि उस बेहद परजीवी पूँजी को जो अभी हमारे यहाँ है। इसे ही हम दलाल और नौकरशाहाना पूँजीवाद कहते हैं जो उत्पादन और रोजगार को बढ़ावा नहीं देता है। हम इस प्रकार के विकृत, आश्रित पूँजीवाद के ही ख़िलाफ़ हैं जो देश में विकसित हो रहा है। हम बताना चाहते हैं कि हम उस उत्पादक और औद्योगिक पूँजीवाद के ख़िलाफ़ नहीं हैं जो वस्तुएँ प्रदान करता है, रोजगार प्रदान करता है, देश के अन्दर मूल्य सृजित करता है, और कम से कम देश के अन्दर साम्राज्यवादी हस्तक्षेप का प्रतिरोध करता है। इस प्रकार के राष्ट्रीय पूँजीवाद को हम प्रोत्साहित करते हैं। हमने राष्ट्रीय पूँजीपतियों और व्यापारियों को इस बात से आश्वस्त करने की कोशिश की कि हम एक अनुकूल माहौल निर्मित करेंगे।

प्रश्न : इस सन्दर्भ में डब्ल्यूटीओ में नेपाल की सदस्यता पर आपकी क्या अवस्थिति है? डब्ल्यूटीओ की सदस्यता के तहत ऐसी ढेरों शर्तें हैं जो आपकी कही बातों में से कुछ को खारिज करती हैं।

हाँ। यह समस्या तो है। डब्ल्यूटीओ से पूरी तरह बाहर रहना बहुत कठिन है। आप डब्ल्यूटीओ के अन्दर भी नहीं रह सकते हैं और इससे बाहर भी नहीं हो सकते हैं। यह एक दुविधा है।

प्रश्न : तो क्या ने.क.पा. (माओवादी) की इस मुद्दे पर कोई औपचारिक अवस्थिति नहीं है?

हमने अभी तक इस पर कोई औपचारिक अवस्थिति नहीं तय की है।

प्रश्न : ट्रेड यूनियनों की भूमिका पर आगे बात करें, तो साम्यवाद और समाजवाद में सैद्धान्तिक रूप से मज़दूर वर्ग शासक की स्थिति में होता है। तो पार्टी नीति और आपकी राजकीय नीति में ट्रेड यूनियनों की क्या स्थिति होगी?

अब तक हमारी ट्रेड यूनियनें बेहद राजनीतिक रही हैं। हमारे यहाँ मज़दूरों की राजनीतिक चेतना बहुत अच्छी है। जब वे माँगें रखते हैं, तो अधिकांशतः वे जानते हैं कि वे राजनीतिक और राज्यसत्ता की लड़ाई लड़ रहे हैं। हमने मज़दूर वर्ग को अच्छी तरह से यह समझाने की कोशिश की है कि जब तक तुम्हारे हाथों में राज्यसत्ता नहीं आ जाती, तब तक तुम्हें चाहे जितने भी आर्थिक लाभ क्यों न मिल जायें, पर तुम खुद को बचा नहीं सकोगे। यह सबसे पहली चीज़ है जो हमने उन्हें अच्छी तरह समझा देने की कोशिश की है। इसलिए ट्रेड यूनियनें राजनीतिक तौर पर बेहद चेतनासम्पन्न हैं। लेकिन इसके अलावा हमें एक सन्तुलन भी कायम करना है, अगर हम आर्थिक माँगें नहीं उठाते हैं तो मज़दूर वर्ग के एक बड़े हिस्से की राजनीतिक चेतना का स्तर ऊँचा नहीं उठाया जा सकेगा वे संगठित नहीं हो पायेंगे। इसलिए हमें राजनीतिक और आर्थिक माँगों के बीच

(पेज 12 पर जारी)

एक "नये नेपाल" के लिए : बाबूराम भट्टराई से बातचीत

(पेज 11 से आगे)

यह सन्तुलन बनाना पड़ेगा। हम इनके बीच सन्तुलन बनाने की कोशिश कर रहे हैं। और कारखानों के अन्दर हम यह करने की कोशिश कर रहे हैं हालाँकि हमने औपचारिक तौर पर सोवियत प्रणाली बनाने का आह्वान नहीं किया है लेकिन सामान्यतः चूँकि अधिकांश मज़दूर, मज़दूरों का बहुलांश हमारी ट्रेड यूनियनों में संगठित है इसलिए वे कारखानों के अन्दर अपनी बात दृढ़ता से रख सकते हैं, जिसके कारण बड़े नीतिगत निर्णय लेते समय प्रबन्धन मज़दूर वर्ग को भरोसे में लेने के लिए मजबूर हो गया है। तो यह उपलब्धि हासिल हो गयी है। अभी यह औपचारिक तौर पर सोवियत के सन्दर्भ में नहीं है

कारखानों में हम राजनीतिक शक्ति के रूप में संगठित नहीं हो पाये हैं। लेकिन उनकी सशक्त उपस्थिति के कारण, वे दबाव डालने और कारखानों के अन्दर लिये जाने वाले निर्णयों को प्रभावित करने में काफी हद तक सफल रहे हैं।

प्रश्न : ज्यादातर नेपाली मज़दूर औद्योगिक या औपचारिक सेक्टर में नहीं हैं। आप कह सकते हैं कि, उनमें से ज्यादातर किसानी समुदाय में हैं। तो किसानों के बारे में और पार्टी तथा राज्य में इनकी भूमिका के बारे में पार्टी की क्या अवस्थिति है?

हमारी अर्थव्यवस्था मुख्यतः किसानी पर आधारित है, क्योंकि दो-तिहाई श्रमशक्ति कृषि कार्य में लगी हुई है। इसलिए इस अर्थ में कृषि सेक्टर हमारा सबसे महत्त्वपूर्ण सेक्टर है। और उनमें से ज्यादातर ग़रीब किसान हैं। जैसे कि आप भूमि-जोत व्यवस्था को देख लीजिये। इसे मालिक किसानी कहते हैं। लगभग 70 प्रतिशत लोगों के पास 1 हेक्टेयर से कम, और लगभग 50 प्रतिशत के पास 0.5 हेक्टेयर से कम जमीन है। इस तरह बहुत कम लोगों के पास जमीन का मालिकाना है। पूरी तरह भूमिहीन किसानों की संख्या कुल की लगभग 10-15 प्रतिशत है। हम लोग किसानों को किसान संघों में संगठित करने का प्रयास कर रहे हैं, और हमारी कोशिश है कि किसान संघों के भीतर ग़रीब किसानों और भूमिहीन किसानों को अलग से संगठित किया जाये। साथ ही, कुछ आन्दोलन भी हुए हैं, सामन्ती भूस्वामियों की जमीन पर कब्जा और किसानों के बीच उसका पुनर्वितरण भी किया गया है। ऐसा हुआ है।

प्रश्न : इसी के साथ, अब सशस्त्र संघर्ष के दौरान क़ब्ज़ा की गयी सम्पत्ति को वापस करने के बारे में दबाव बन रहा है और वायदे भी किये गये हैं, और आपकी पार्टी ने (चुनाव के बाद) भूमि सुधार को आगे बढ़ाने के बारे में कुछ वक्तव्य भी दिये हैं।

हाँ, यह शान्ति प्रक्रिया में बाधक बनने वाले बिन्दुओं में से एक है, क्योंकि जनयुद्ध के दौरान किसानों द्वारा ज़मींदारों की ज़मीनों पर कब्जा किया गया था। शान्ति समझौते में, एक अस्पष्ट प्रावधान था। जिस ज़मीन को अन्यायपूर्ण तरीक़े से छीना गया था, उसे लौटा दिया जायेगा। यही वह शब्द है 'अन्यायपूर्ण', 'अन्यायपूर्वक'। यह बहुत अस्पष्ट है। यही कारण है कि इसका हल नहीं निकल पाया। यह एक रुकावट पैदा करने वाला बिन्दु है। हमारे किसान जमीन नहीं लौटा रहे हैं क्योंकि उनका सोचना है कि यह कब्जा न्यायपूर्ण है, क्योंकि, आप देखिये, जमींदार ने दरअसल हमेशा ही इसे किसानों से हथियाया है। इसलिए उन्होंने उस पर वापस कब्जा कर लिया। यह किसानों का तर्क है। और जमींदारों की बात करें, तो वे कहेंगे कि व्यक्तिगत सम्पत्ति रखना उनका अधिकार है, जनवादी (बुर्जुआ) पक्ष इसी रूप में प्रोत्साहित करते हैं। तो इस तरह का संघर्ष जारी है। लेकिन अन्तरिम संविधान में हम वैज्ञानिक ढंग से भूमि सुधार का एक प्रावधान बनायेंगे। हालाँकि हम 'रैडिकल' या 'क्रान्तिकारी' शब्द रखना चाहते थे, लेकिन हमें 'वैज्ञानिक ढंग से' भूमि सुधार करने की बात पर समझौता करना पड़ा। इस तरह यहाँ एक बार फिर से अस्पष्टता है 'वैज्ञानिक ढंग से भूमि सुधार' करने से हमारा क्या अभिप्राय है? क्रान्तिकारी भूमि सुधार का सैद्धान्तिक आधार हमारे मुताबिक यह है कि ज़मीन जोतने वाले की होनी चाहिए। जो लोग असल में जमीन जोत रहे हैं जमीन पर उनका मालिकाना होना चाहिए। यह है हमारी व्याख्या। पर दूसरा पक्ष इसका अर्थ अलग ढंग से निकालने की कोशिश कर रहा है। इसलिए इस मुद्दे पर तर्क-वितर्क भी जारी है।

प्रश्न : पूँजी के खण्ड 3 में, मार्क्स ने लिखा है कि यदि आप सिर्फ़ सीधे ज़मीन के छोटे-छोटे टुकड़ों का पुनर्वितरण करते हैं तो यह दरअसल थोड़े-से हाथों में पहले से भी अधिक ज़मीन के सिमट आने की एक प्रक्रिया बन जाती है क्योंकि ज़मीन के छोटे-छोटे टुकड़े बेहद संकेन्द्रित पूँजी का मुक़ाबला कर रहे होते हैं, और उनके लिए अपना अस्तित्व बचाये रखना बहुत कठिन हो जाता है।

यही वजह है कि हम लोग सहकारिता को प्रोत्साहित करने का प्रयास कर रहे हैं। आप देखिये, हमारा एक नारा यह रहा है कि छोटे किसानों को स्वयं को कोऑपरेटिवों में संगठित करना चाहिए और राज्य द्वारा इन कोऑपरेटिवों को कुछ विशिष्ट सुविधाएँ और अधिकार प्रदान किये जाने चाहिए। यदि वे कोऑपरेटिवों में काम करते हैं और संगठित हो जाते हैं, तो वे मुक़ाबला कर सकते हैं, या वे कम से कम पूँजी के अतिक्रमण से, और बड़ी पूँजी से अपना बचाव तो कर ही सकते हैं।

प्रश्न : यह एक ऐसा उदाहरण है जिसे अन्तरिम संविधान में किसी न किसी रूप में शामिल किया जा सकता है, और इसके महत्त्वपूर्ण प्रगतिशील नतीजे आ सकते हैं। लेकिन जैसे परिणाम सामने आये हैं, उसमें अगर सारी वाम ताकतें एकजुट भी हो जायें, तब भी किसी संवैधानिक प्रावधान को पास करने लायक आवश्यक दो-तिहाई बहुमत नहीं मिलता, ये सिर्फ तकरीबन साठ फ़ीसदी होता है। तो यह वास्तव में एक दुविधा की स्थिति है कि संविधान सभा कैसे काम करे जिससे, भले ही यह एक समझौता हो, एक ऐसा संविधान बने जो सही मायने में प्रगतिशील हो।

आप बिल्कुल सही हैं। दरअसल रास्ता आसान नहीं होगा, और नया संविधान बनाने के लिए हमें एक बड़े संघर्ष का सामना करना होगा। हम यह जानते हैं। लेकिन एक अच्छी बात यह है कि, चूँकि संविधान सभा में हमें 37% सीटें मिली हैं, जो एक-तिहाई से ज्यादा हैं, इसलिए आप देख सकते हैं कि हमारे पास वीटो पावर है। हमारे बिना उनके पास भी दो-तिहाई मत नहीं होंगे। हम कम से कम किसी बेहद प्रतिक्रियावादी संविधान का प्रतिरोध तो कर सकते हैं। यदि वे हमें एक बेहद प्रगतिशील संविधान नहीं बनाने देंगे, तब भी हम उन्हें एक बेहद प्रतिक्रियावादी संविधान बनाने से रोक सकते हैं। इसलिए यह एक बड़ा गतिरोध होगा। देखिये, हमारे लिए जीत हासिल करना कठिन होगा, लेकिन हम हारेंगे नहीं। हम हार नहीं सकते। लेकिन दूसरी तरफ वे हमें जीतने भी नहीं देना चाहेंगे। यह बात है।

प्रश्न : चूँकि आपके पास वीटो पावर है, इसलिए हो सकता है कि वे भी थोड़ा पीछे हटने को मजबूर हो जाएँ। लेकिन वे भी मजबूरी का दाँव खेल सकते हैं जैसा कि उन्होंने अभी पिछली सरकार के साथ किया था, जिसमें गतिरोध बनाने और इसके चलते लगातार बदलाव न होने का आरोप आपके सिर पर मढ़ा जा सकता है मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि ऐसा ही होगा क्योंकि आप ही वह ताक़त हैं जो किसी निर्णय को लिये जाने से रोक सकते हैं। उदाहरण के लिए, पिछले कुछ वर्षों के दौरान राजा ने, इन कांग्रेसी और दूसरी सरकारों के साथ, इस क़िस्म का राजनीतिक खेल काफी प्रभावी ढंग से खेला था।

यही बात है, आप देखिये, नेपाल में सामन्तवाद और राजशाही, संसदीय बुर्जुआ शक्तियों, और सर्वहारा वाम शक्तियों के बीच इस त्रिकोणीय विवाद के साथ यही बात है। सबसे पहले हम सामन्तवाद और राजशाही का खात्मा करना चाहते हैं। इसके बाद आने वाले दिनों में बुर्जुआ शक्तियों और सर्वहारा वाम शक्तियों के बीच का विवाद और ज़्यादा तीखा हो जाएगा। असल में हमने ख़ुद को इसके लिए तैयार कर लिया है। अगर वे हमें नेतृत्व नहीं करने देते हैं और प्रगतिशील कदम नहीं उठाने देते हैं, तो हम प्रतिरोध करेंगे। हमारा मुख्य हथियार होगा जन-समुदाय को लामबन्द करना। यही हमारी रणनीति रही है। केन्द्रीय समिति की बैठक में हमने यही निर्णय लिया है। हम दो-तरफ़ा दृष्टिकोण अपनायेंगे। हम राज्य के अन्दर से अधिकतम हस्तक्षेप करने का प्रयास करेंगे। हम राज्य का नेतृत्व अपने हाथों में लेने का प्रयास करेंगे। हम प्रगतिशील कार्यक्रमों को लागू करने का प्रयास करेंगे। लेकिन हम जानते हैं कि हमें कड़े प्रतिरोध का सामना करना पड़ेगा। इसका मुक़ाबला करने के लिए, हमें जन-समुदाय को लामबन्द और संगठित करना होगा। हमने पार्टी में, निचले स्तरों पर, यह निर्देश जारी कर दिये हैं कि उन्हें खुद को संगठित और जन-समुदाय को निर्देशित करना चाहिए। उन्हें किसी भी समय सड़कों पर उतरना और प्रतिरोध करना पड़ सकता है।

प्रश्न : जिस क़िस्म की लामबन्दी करने की बात आप कर रहे हैं और इस साक्षात्कार में पहले आपने जिस तात्कालिक राहत की, वास्तविक तात्कालिक राहत देने की ज़रूरत की बात की है, इन दोनों ही सन्दर्भों में वाई.सी.एल. (युवा कम्युनिस्ट लीग) की भूमिका के बारे में अब आप किस तरह से सोच रहे हैं। क्या आपको इसमें वाई.सी.एल. की भी कोई भूमिका नज़र आती है?

वाई.सी.एल. की बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका होगी। प्रतिक्रियावादी वाई.सी.एल. से बहुत भय खाते हैं। इस अर्थ में वे सही हैं, क्योंकि, हालाँकि यह सच नहीं है कि वे किसी ग़ैर-कानूनी या अन्य प्रकार के बल का प्रयोग नहीं कर रहे हैं, लेकिन यह एक बेहद समर्पित राजनीतिक शक्ति है। चुनावों के दौरान और इससे पहले भी उन्होंने जन-समुदाय को संगठित करने और प्रतिक्रियावादी वर्गों की डराने-धमकाने की रणनीतियों का प्रतिरोध करने में बहुत अहम भूमिका निभायी है। इन तमाम वर्षों के दौरान, प्रतिक्रियावादी वर्ग ग़रीब जन-समुदाय को आतंकित करते रहे हैं, उन्हें वोट नहीं डालने देते रहे हैं। यह सब पहले हुआ है, लेकिन इस बार वाई.सी.एल. ने इसका प्रतिरोध किया। और तब प्रतिक्रियावादियों ने जोर-शोर से चिल्लाना शुरू किया : "वाई.सी.एल. आतंक फैलाता है!" वाई.सी.एल. डराती-धमकाती नहीं है, बल्कि, असलियत यह है कि, इन तमाम वर्षों का पूरा इतिहास देखें तो वाई.सी.एल. ने प्रतिक्रियावादी वर्गों द्वारा लोगों को डराये-धमकाये जाने से रोका है। इस बात को सभी जानते हैं। इसलिए आने वाले दिनों में, वाई.सी.एल. का एक काम यह होगा कि वह सामन्ती और राजतन्त्रवादी और प्रतिक्रियावादी वर्गों के किसी भी प्रकार के नृशंस प्रतिक्रियावादी हमलों का प्रतिरोध करे और इनसे जन-समुदाय की हिफ़ाजत करे। उनके काम का दूसरा हिस्सा होगा उन्हें उत्पादक गतिविधियों में शामिल करना और जन-साधारण को राहत प्रदान करना।

प्रश्न : जब वे उत्पादक गतिविधियों में शामिल होंगे तो वे शिक्षण मण्डलियों में भी शामिल हो सकते हैं और लोगों को संविधान सभा के बारे में भी शिक्षित कर सकते हैं।

हाँ, हाँ, यह सोचने का बिल्कुल सही तरीक़ा है : हम अपने वाई.सी.एल. कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करेंगे ताकि वे जन-समुदाय को संगठित कर सकें, शिक्षण और स्वास्थ्य सेवाएँ प्रदान कर सकें, और निर्माण तथा उत्पादक गतिविधियों में शामिल हो सकें।

प्रश्न : क्या यह सही है कि कांग्रेस या ने.क.पा. (एमाले) में से कोई गठबन्धन सरकार में शामिल होने के लिए शर्त रख रहे हैं कि वाई.सी.एल. को भंग कर दिया जाये?

देखिये, यह उनके प्रतिक्रियावादी चरित्र को उजागर करता है। चूँकि इन तमाम वर्षों के दौरान वे धोखाधड़ी-बेईमानी करते रहे हैं और (...)। वे जानते हैं कि वाई.सी.एल. ने इसका विरोध किया है, यही वजह है कि वे यह बात उठा रहे हैं। इसलिए ऐसी मूर्खतापूर्ण और प्रतिक्रियावादी लाइन पर सोचने का सवाल ही नहीं उठता है। वाई.सी.एल. जन-समुदाय के पक्ष में खड़ा रहेगा। अगर वे शामिल नहीं होना चाहते हैं तो न हों। हमारा कहना है कि अगर आप सरकार में शामिल होना चाहते हैं, तो शामिल होइए। गठबन्धन के एक हिस्से के तौर पर हम सरकार का नेतृत्व करेंगे। अगर वे इसके लिए तैयार नहीं हैं, तो अकेली सबसे बड़ी पार्टी होने के चलते हम सरकार बनायेंगे। अगर वे ऐसा नहीं करने देंगे, तो हम जनता के पास चले जायेंगे और एक और आन्दोलन खड़ा करेंगे। हमारे पास यही तीन रास्ते हैं। लेकिन बुनियादी मुद्दों पर हम कोई समझौता नहीं करेंगे। बिल्कुल नहीं। चूँकि जनता बदलाव चाहती है, इसलिए उसने हमें बदलाव के लिए जनादेश दिया है। यदि प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ हमें इस जनादेश पर अमल नहीं करने देती हैं, तो प्रतिक्रियावादियों के दबाव के आगे घुटने टेकने के बजाय हम जन-समुदाय के पास लौट जायेंगे।

प्रश्न : और बदलाव के इस जनादेश ने एक "नये नेपाल" के नारे का रूप ले लिया है। इसका ठीक-ठीक क्या अर्थ है और आप इसे किस तरह साकार करने की उम्मीद करते हैं?

हाँ, चुनाव के दौरान हमारी पार्टी द्वारा दिया गया *"नये नेपाल"* का नारा बेहद प्रभावशाली रहा है। हमारा मूल नारा था, "नये नेपाल के लिए नया विचार और नया नेतृत्व"। और मैं समझता हूँ कि लोगों ने इसे बहुत अच्छे ढंग से लिया, और यही वजह है कि उन्होंने हमें वोट दिया। तो *नये नेपाल* से हमारा अभिप्राय यह है कि, पहली बात, हम राजनीतिक तौर पर सभी प्रकार के सामन्ती राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक सम्बन्धों को चकनाचूर कर देना चाहते हैं। यह *नये नेपाल* का पहला पक्ष होगा। *नये नेपाल* का दूसरा पहलू होगा, प्रगतिशील ढंग से आमूलचूल सामाजिक-आर्थिक रूपान्तरण करना। पहला पहलू पुराने का ध्वंस करना, और दूसरा नये का निर्माण करना होगा। इसके ये दो पहलू होंगे। और हमारा ध्यान मुख्य रूप से आर्थिक गतिविधियों पर केन्द्रित होगा : कृषि क्षेत्र का रूपान्तरण करना, और इसके बाद उत्पादक शक्तियों, औद्योगिक सम्बन्धों का विकास करना, ताकि मज़दूरों और युवाओं को रोजगार मिले। और यह समाजवाद की दिशा में जाने के लिए एक आधार का निर्माण करेगा। आर्थिक क्षेत्र में हमने यह नारा दिया था : "नयी संक्रमणशील आर्थिक नीति"। इसका अर्थ है समाजवाद की दिशा में उन्मुख औद्योगिक पूँजीवाद औद्योगिक पूँजी का विकास। अन्तरिम अवधि के लिए हमारा यह काम है।

प्रश्न : कृषि के मुद्दे पर एक बार फिर वापस लौटें तो अपने लेख में, आपने विकास को मापने के लिए उर्वरकों, मशीनों के इस्तेमाल और भू-स्वामित्व का संकेन्द्रण जैसे जिन संकेतकों का इस्तेमाल किया है वे प्रचलित क़िस्म के संकेतक मालूम होते हैं। क्या आपको लगता है कि यह वाकई नेपाल की स्थिति में सही बैठता है?

नहीं, मैं इस बात को समझता हूँ। देखिये, सांख्यिकीय आँकड़ों की कमी के कारण मैं ऐसा करने के लिए बाध्य था। मैं ख़ुद अपने आँकड़े तो बना नहीं सकता, मुझे दिये गये आँकड़ों और दिये गये फ्रेमवर्क पर निर्भर रहना पड़ता है और इन्हीं में यह दिया गया था। इसी बाध्यता के कारण, मैंने इन संकेतकों का प्रयोग किया था। यही वजह थी कि मैंने सिर्फ एक अनुमान पेश किया, वास्तविक औसत नहीं, बल्कि सिर्फ कुछ अनुमान। मैंने अपने लेख में इसका ज़िक्र किया है।

प्रश्न : तो अब कृषि के रूपान्तरण पर विचार करते हुए, अर्थशास्त्र के किस आधार पर, किस तरह की चीज़ों पर आप अपना ध्यान केन्द्रित कर रहे हैं? मान लीजिये कि आप सरकार बना लेते हैं और कृषि नीति तय करते हैं, तो आपके तीन सबसे प्रमुख क़दम क्या होंगे?

कृषि क्षेत्र में, हम सबसे पहले, उत्पादन सम्बन्धों में बदलाव लायेंगे और भू-स्वामित्व के रूप को बदलना चाहेंगे। ख़ासकर मैदानी क्षेत्रों में; वहाँ ज़मींदारी प्रथा है। ये अन्यत्रवासी ज़मींदार जिनके पास ज़मीनें हैं, हज़ारों हेक्टेयर ज़मीन पर जिनका मालिकाना है : वे शहरों में रहते हैं, वे निवेश नहीं करते, वे उत्पादन का प्रबन्धन नहीं करते, और इस तरह से वे ज़मीन जोतने वाले ग़रीब किसानों का शोषण करते हैं। किसानों का शोषण होता है और उत्पादकता बहुत

(पेज 15 पर जारी)

(पिछले अंक से आगे)

द्वितीय विश्व युद्ध में हिटलर को दरअसल किसने हराया?

स्तालिनग्राद की गलियों में लड़ने वाले लाल योद्धाओं ने!

दुनिया का पूँजीवादी मीडिया एक ओर नये-नये मनगढ़न्त किस्सों का प्रचार कर मज़दूर वर्ग के महान नेताओं के चरित्र हनन में जुटा रहता है वहीं दूसरी ओर नये-नये झूठ गढ़कर उसके महान संघर्षों के इतिहास की सच्चाइयों को भी उसके नीचे दबा देने की कवायदें भी जारी रहती हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध के बारे में भी तरह-तरह के झूठ का प्रचार लगातार जारी रहता है। इतिहास की किताबों में भी यह सच्चाई नहीं उभर पाती कि मानवता के दुश्मन, नाजीवादी जल्लाद हिटलर को दरअसल किसने हराया?

अमेरिकी और ब्रिटिश मीडिया ख़ास तौर पर इस झूठ का बार-बार प्रचार करता है कि उनकी फौजों ने हिटलर को मात दी। इस झूठ को सच साबित करने के लिए वे उस तथाकथित 'कयामत के दिन' (डी-डे) 6 जून 1944 का बार-बार प्रचार करते हैं जब एक लाख पचास हज़ार की तादाद में ब्रिटिश-अमेरिकी सेनाएँ हिटलर की सेनाओं से लड़ने के लिए नारमैंडी (फ्रांस) में उतरी थीं। जोर-शोर से प्रचार यह किया जाता है कि इसी आक्रमण से यूरोप में द्वितीय विश्व युद्ध का पासा पलट गया था। जबकि सच्चाई यह है कि उस युद्ध का मुख्य मोड़बिन्दु तो वोल्गा नदी के किनारे बसे हुए एक रूसी शहर से आया था। 1942 में स्तालिनग्राद शहर की गलियों में 80 दिन और 80 रात जो लड़ाई चली, तत्कालीन सोवियत संघ के लाल सैनिकों और मज़दूरों ने परम्परागत देशी हथियारों से आधुनिकतम मानी जाने वाली जर्मन नाजी सेना का जिस तरह मुकाबला किया, वह विश्वयुद्ध का ऐतिहासिक मोड़बिन्दु था। यह कहानी विश्व इतिहास की एक महाकाव्यात्मक संघर्ष गाथा है जिसे दुनिया की मेहनतकश जनता की यादों से मिटा देने की कोशिशें दिन-रात चलती रहती हैं।

आज विश्व सर्वहारा क्रान्ति के इस नये चक्र में, जबकि नयी क्रान्तियों की तैयारियों का काल लम्बा खिंचता जा रहा है, यह बेहद ज़रूरी है कि नयी पीढ़ी के मेहनतकशों को अतीत के महान संघर्षों की विरासत और उपलब्धियों से लगातार परिचित कराते रहा जाये। यह नये सर्वहारा पुनर्जागरण और प्रबोधन का एक ज़रूरी कार्यभार है। अन्तरराष्ट्रीय मज़दूर वर्ग के महान शिक्षक और नेता स्तालिन की पचपनवीं पुण्यतिथि (6 मार्च) के अवसर पर हमने बिगुल के पाठकों के लिए इस विशेष सामग्री का धारावाहिक प्रकाशन शुरू किया था। इस अंक में हम लेख की तीसरी और आख़िरी किस्त दे रहे हैं। –सम्पादक

आमने-सामने लड़ाई की शैली

नाजियों के पास भारी संख्या में टैंक, तोपें और विमान थे। सोवियत कम्युनिस्ट फौजों के पास भी कुछ भारी हथियार थे–जिनमें विमानभेदी तोपें भी थीं–लेकिन उन्हें ज़्यादातर हल्के हथियारों–जैसे ग्रेनेडों, मोलोतोव कॉकटेलों और आज की मामूली बन्दूकों जैसी टॉमीगनों–पर भरोसा करना पड़ता था।

जर्मन साम्राज्यवादी सेना का विशाल शस्त्रागार उसे उसकी पसन्द के मुताबिक ''लड़ाई का तरीका'' चुनने का सुभीता प्रदान कर देता था–ठीक वैसे ही, जैसे आज अमेरिकी सेना का शस्त्रागार ऐसा सुभीता प्रदान करता है।

जर्मन वायुसेना आमतौर पर तबतक इन्तजार करती रहती जबतक कि सोवियत और नाजी ठिकानों के बीच एक स्पष्ट ''निर्जन क्षेत्र'' न मिल जाये–और जब यह सुलभ हो जाता था तब तो वह सोवियत खाइयों और किलेबन्दियों पर भीषण बमबारी करतीं। जर्मन टैंक-चालक आमतौर पर तबतक खुलकर नहीं आते जबतक कि जर्मन वायुसेना सोवियत ठिकानों पर बमबारी नहीं कर लेती और जर्मन पैदल सैनिक भी तबतक पूरे तौर से लड़ाई में शामिल नहीं होते, जबतक कि टैंक मोर्चाबन्दियों पर गोले नहीं बरसा लेते। लेकिन जब सोवियत सेना जर्मनों का इस ढंग से लड़ना असम्भव कर देती, तब जर्मन फौजें प्रायः लड़ाई बन्द कर देतीं और पीछे लौट जातीं।

सोवियत कामरेडों ने यह जान लिया था कि एकदम निकट होकर, आमने-सामने की लड़ाई की शैली जर्मनों के लिए ''अपने ढंग से लड़ना'' मुश्किल कर देती थी। स्तालिनग्राद स्थित बासठवीं सोवियत सेना के कमाण्डर, वासिली चुइकोव लिखते हैं:

''इसलिए हमारी समझ में आ गया कि जहां तक सम्भव हो सके, हमें चाहिए कि हम ''निर्जन क्षेत्र'' को संकुचित करते हुए एक हथगोले की मार-सीमा तक कम कर दें।'' सोवियत योद्धा दुश्मन के यथासम्भव निकट पहुंच जाने की कोशिश करते, ताकि जर्मन वायुसेना जर्मन सैनिकों के मारे जाने का जोखिम उठाये बिना सामने की सोवियत यूनिटों और खाइयों पर बमबारी न कर सकें।

चुइकोव यह भी लिखते हैं कि जर्मन आमने-सामने होकर लड़ने से कतराते थे, क्योंकि ''उनमें यह नैतिक साहस नहीं था कि वे एक हथियारबन्द सोवियत सैनिक से आँख मिला सकें। दुश्मन सैनिक, खासतौर से रात में, काफी दूर अगली चौकी पर ही दिखायी पड़ता; वह अपना हौसल बढ़ाने के लिए, हर पाच-दस मिनट पर, अपने टॉमीगन से लगातार एक धमाका कर दिया करता। हमारे सैनिक ऐसे 'योद्धाओं' को पाकर रेंगते हुए उन तक पहुँच जाते और गोली या संगीन से उनका काम तमाम कर देते।''

रक्षात्मक लड़ाई के भीतर आक्रमण लड़ाई

स्तालिनग्राद में सोवियत संघ की बासठवीं सेना मुख्यतः एक रक्षात्मक लड़ाई लड़ रही थी–डटे रहने और जर्मन सेना को विलम्बित करते रहने की लड़ाई, ताकि दूसरी सोवियत सेनाएं जर्मनों को घेर सकें। लेकिन इस पूरी रक्षात्मक लड़ाई में भी निरन्तर आक्रमण करते रहना अत्यन्त आवश्यक था। आक्रामक कार्रवाइयाँ जर्मन सेना की पहलकदमी को-उनकी इस निर्णय कर पाने की क्षमता को सीमित कर देतीं कि लड़ाई कहाँ पर और कब होगी।

चुइकोव सोवियत सेना की सचेष्ट रक्षात्मक लड़ाई का वर्णन करते हुए कहते हैं : ''जब कभी भी दुश्मन हमारी रक्षा-पंक्ति के भीतर घुसपैठ करता, उसका सफाया या तो गोलियों से भूनकर या ऐसे प्रत्याक्रमणों द्वारा कर दिया जाता जो, आकस्मिक आक्रमणों के रूप में, या तो दुश्मन के पार्श्व भागों पर किये जाते, या पिछले भाग पर।''

लाल योद्धा जर्मन टैंकों पर घात लगाकर आक्रमण कर देते, क्योंकि वे ऐसे ही रास्तों पर चलते थे जिनका पूर्वानुमान किया जा सकता था। लाल योद्धा तबतक प्रतीक्षा करते रहते जबतक कि टैंक उनके बिलकुल करीब नहीं आ जाते-और तब उन्हें एक निकट मार-सीमा के भीतर पाकर टैंक-भेदी राइफलों और अधिक भारी टैंकभेदी अस्त्रों से बेकार कर देते। इससे जर्मन पैदल सेना ठिठककर रुक जाती, और आमतौर पर उन जलते हुए टैंकों के पीछे भीड़ लगा देती।0 तब सोवियत फौजों के लिए यह सम्भव हो जाता कि वे जर्मन पैदल सेना के निकट जा पहुँचे, जबकि जर्मन स्तूका आरै जे-88 लड़ाकू विमानों के लिए यह असम्भव होता कि वे सोवियत योद्धाओं पर हवाई हमले कर सकें।

चुइकोव लिखते हैं :''पैदल सेना और टैंकों के घुसपैठ करने पर उन्हें अलग-अलग नष्ट कर दिया जाता: टैंक तो पैदल सेना के बिना ज्यादा कुछ कर नहीं सकते थे और बिना कुछ हासिल किये, भारी नुकसान उठाकर पीछे लौट जाते थे...। प्रत्याक्रमणों से दुश्मन को हमेशा ही भारी नुकसान होता, और अक्सर ऐसा होता कि उसे एक दिये गये क्षेत्र में आक्रमण करने का इरादा छोड़, मोर्चे के इधर-उधर इस फिराक में दौड़ लगाने के लिये मजबूर हो जाना पड़ता कि कहीं उसे हमारी रक्षात्मक मोर्चाबन्दियों में कोई कमजोर बिन्दु मिल जाये। इससे उसका वक्त बर्बाद होता और आगे बढ़ने की उसकी रफ़्तार घट जाती...। हमारा उद्देश्य प्रायः इतना ही नहीं होता कि दुश्मन का नुकसान करें, बल्कि यह भी कि हम अपनी पैदल सेना और टैंकों के आकस्मिक हमले द्वारा तथा गोलन्दाज फौज और वायुसेना की मदद से, दुश्मन के कूच करने के ठिकानों में घुसपैठ कर जायें, उसकी कतारबन्दियों को अस्तव्यस्त कर दें, और उसके आक्रमण की योजना को विफल करके मोहलत हासिल कर लें।''

शहरी लड़ाई दोनों ही पक्षों के लिए फौजों की बड़ी-बड़ी कतारबन्दियों को कमान में रखना और संचालित करना कठिन बना देती थी। चुइकोव वर्णन करते हैं कि कैसे लाल योद्धाओं ने इस स्थिति का अपने हक़ में फायदा उठाया: ''शहरी लड़ाई एक खास तरह की लड़ाई होती है। यहां चीजें ताक़त से नहीं, बल्कि कौशल, साधनसम्पन्नता और मुस्तैदी के द्वारा व्यवस्थित की जाती हैं... और इसीलिए यहाँ पैदल सेनिकों के छोटे-छोटे समूह, एकाकी बन्दूकची और टैंक ही युद्ध-मंच के केन्द्र पर कब्जा कर सकते थे।''

सोवियत कमाण्डरों ने अपनी फौजों के कुछ भागों को ''तूफानी टोलियों'' नामक छोटी-छोटी सचल इकाइयों में संगठित करना सीख लिया था। चुइकाव लिखते हैं: ''ये छोटे लेकिन शक्तिशाली ग्रुप थे, जो सांपों की भांति चपल-चालाक और कार्रवाई में अदम्य थे।'' समयबद्धता, आकस्मिकता, रफ्तार और हिम्मत तूफानीटोलियों की कार्रवाइयों की सफलता की कुंजी थी।

इन तूफानी टोलियों पर हवाई वार कर पाना कठिन था। वे दुश्मन के ठिकानों पर वार करने के लिए उनकी किलेबन्दियों में पांव के सहारे रेंगते हुए गह्वरों और खण्डहरों में जा छिपते। रात में वे सुरंगें और दर्रे खोदते, और दिन में उन्हें ढँककर छिपा देते। तूफानी टोलियां अचानक जर्मन सेनाओं के मध्य से प्रकट हो जातीं-जहाँ जर्मन तोपें, हथियारबन्द गाड़ियाँ और हवाई शक्ति कोई काम न आती। लाल सैनिक अधिकतम फायदा उठाने की स्थिति में हमला करते-जब दुश्मन सो या खाना खा रहा होता, या पाली बदलने को होता। गोलियों, हथगोलों, छुरों और धारदार बनाये हुए बेलचों से आमने-सामने लड़ाई करते हुए लाल योद्धा नाजियों को उनके प्रमुख ठिकानों से खदेड़ देते-जो कि किसी तहखाने, किसी कमरे, या किसी गलियारे के लिए लड़ रहे होते हैं।

चुइकोव लिखते हैं: ''रात और रात की लड़ाई हमारे लिए स्वाभाविक बात थी। दुश्मन रात में नहीं लड़ सकता था, लेकिन हम लोगों ने ज़रूरतवश इसका अभ्यास कर लिया था : दिनभर दुश्मन के विमान हमारी फौजों के ऊपर मंड़राते रहते, उन्हें अपने सिर तक उठाने की स्थिति नहीं बनती। लेकिन रात में हमें 'लुफ्तवैफे' (जर्मन वायुसेना) का कोई भय नहीं रहता।''

कम्युनिस्ट पार्टी ने बासठवीं सेना के सैनिकों के बीच एक ''स्नाइपर अभियान'' चलाया। सैनिक प्रत्येक गोली को सार्थक करने की कोशिश करते-निशानेबाजी की ट्रेनिंग दी जाती और छिपकर सफलतापूर्वक गोली चलाने के बारे में लाल फौजों के बीच व्यापक विचार-विमर्श किया जाता। स्नाइपरों के छोटे-छोटे दस्ते कंकड़-पत्थरों की अन्तहीन ढेरियों में छिपकर आगे की ओर बढ़े चले आ रहे दुश्मन के काफी बड़े-बड़े समूहों को छिन्न-भिन्न करके टुकड़े-टुकड़े कर डालते। चुइकोव इसका सार प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि ''हर जर्मन सैनिक को निश्चित रूप से यह अनुभव करा देना था कि वह रूसी बन्दूक की नली के नीचे जी रहा है, जो उसे गोली मारकर मौत की नींद सुला देने के लिए हमेशा तैयार है।''

लाल सेना को उन जनसमुदायों पर भरोसा था जो दुश्मन द्वारा बनायी जाने वाली योजनाओं की महत्त्वपूर्ण सूचना एकत्र करने के लिए स्तालिनग्राद के पीछे जमे हुए थे। उदाहरण के तौर पर, एक साहसी महिला जर्मन कतारों के पीछे से, धुआँ और कंकड़-पत्थरों के ढेर के बीच से प्रकट हुई और एक आसन्न जर्मन आक्रमण के बारे में महत्त्वपूर्ण खुफियां सूचना दे गयी।

वोल्गा पार करने के लिए नावों का इन्तजार करते सोवियत सैनिकों को ऐसे पर्चे पढ़ने को मिलते जिनमें इस नज़दीकी लड़ाई की शैली का पूरा विवरण देते हुए लिखा होता था कि ''शहरी लड़ाई में एक सैनिक को क्या-क्या बातें जाननी चाहिए और कैसे कार्रवाई करनी चाहिए।'' इस तरह के जन-कार्रवाई के तरीकों से विजय में अधिकतकम योगदान देने के लिए साधारण सैनिकों और मेहनतकश जनता को भरपूर अवसर मिल जाता था। ''अपने ढंग से लड़ते हुए'' सोवियत सेनाएं दुश्मन की भारी मारक शक्ति को नाकाम कर देती थीं। लड़ाई की यह शैली उच्चस्तरीय चेतना और प्रचण्ड आत्म-बलिदान पर आधारित थी। बार-बार हासिल की जा रही विजयें, चाहे वे किसी तहखाने या बीहड़ को साफ करने से ही सम्बन्धित क्यों न रही हों, लाल फौजों के लड़ने के हौसले को नई बुलन्दी पर पहुँचा देती थीं।

इन सोवियत रणकौशलों के चलते जर्मन सैनिक बुरी तरह बौखला जाते। वे अक्सर अपने प्रमुख किलेबन्दी वाले ठिकानों को भी छोड़कर पीछे भाग खड़े होते।

नाजी-विरोधी किलेबन्दियों की व्यूहरचना

सोवियत कमाण्डर चुइकोव लिखते हैं कि ''शहर की इमारतें तरंग-रोध की भांति होती हैं। वे दुश्मन की आगे बढ़ती कतारों को रोक देती हैं तथा उनके सैनिकों को गली के रास्ते चलने के लिए मजबूर कर देती हैं। अतः हमलोग मजबूत इमारतों के बीच दृढ़तापूर्वक जम गये थे, और उनमें हमने छोटी-छोटी रक्षक सेनाएं स्थापित कर ली थीं जो घिर जाने पर चौतरफा गोलीबारी कर सकती थीं। विशेष रूप से मजबूत इमारतें हमें मज़बूत रक्षात्मक अवस्थितियां

(पेज 15 पर जारी)

नेपाल का कम्युनिस्ट आन्दोलन : संक्षिप्त इतिहास

(पेज 7 से आगे)

संस्करण है जो राजशाही के साथ समझौते करके व्यवस्था की हिफ़ाज़त और जनता के दमन के लिए प्रतिबद्ध है। साथ ही, ने.क.पा. (एमाले) का असली चेहरा भी नंगा हो गया। हर संशोधनवादी पार्टी की तरह सत्तासीन होते ही ने.का.पा. (एमाले) ने कुर्सी के लिए हरसम्भव जोड़-तोड़ की, यहाँ तक कि राजतन्त्रवादी दलों और राजा की बेशर्मी से ख़िदमत कर रहे शेर बहादुर देउबा के नेतृत्व वाली ने.कां. के धड़े के साथ भी गठबन्धन किया। जनान्दोलनों के दमन में यह किसी भी बुर्जुआ दल से पीछे नहीं रहा और सीमित बुर्जुआ सुधारों तक के लिए कोई पहल नहीं की। पार्टी में ऊपर से नीचे तक भ्रष्टाचार का बोलबाला हो गया। नेपाल की क्रान्तिकारी वामधारा की एक विशिष्टता यह रही कि अपनी कई विचारधारात्मक-राजनीतिक कमियों-कमजोरियों के बावजूद उसने इस पूरी अवधि के दौरान ज्यादातर सही समय पर सटीक पहलक़दमी का परिचय दिया और नेपाली जनता उसे एकमात्र सही विकल्प के रूप में देखने लगी। बुर्जुआ चुनाव और संसद का क्रान्तिकारी प्रचार एवं भण्डाफोड़ के लिए काफ़ी हद तक सही ढंग से इस्तेमाल किया गया। ने.क.पा. (माओवादी) हालाँकि "वामपन्थी" भटकाव का एक हद तक शिकार थी, लेकिन चुनावी राजनीति की गन्दगी से त्रस्त जनता ने उसके द्वारा छेड़े गये क्रान्तिकारी लोकयुद्ध को काफ़ी उम्मीद और अपेक्षाओं के साथ समर्थन दिया। फ़रवरी, 2005 के राजदरबार हत्याकाण्ड और उसके बाद क़ायम ज्ञानेन्द्र के निरंकुश दमनकारी शासन ने राजशाही के आधार को अत्यधिक कमज़ोर कर दिया। शासक वर्ग एकदम अलग-थलग पड़ गया और उसके आपसी अन्तरविरोध भी तीखे हो गये। बुर्जुआ और संशोधनवादी दलों के अस्तित्व को बनाये रखने की यह विवशता थी कि वे राजशाही-विरोधी संघर्ष में शामिल हों। इन स्थितियों में क्रान्तिकारी वाम और विशेषकर ने.क.पा. (माओवादी) द्वारा प्रस्तुत ठोस विकल्प का एजेण्डा जनता का अपना एजेण्डा हो गया, जिसकी तार्किक परिणति संविधान सभा के चुनाव और उसमें ने.क.पा. (माओवादी) के सबसे बड़े दल के रूप में उभरने के तौर पर सामने आयी। इस पूरी प्रक्रिया में सही समय पर त्वरित, सटीक पहलक़दमी की सर्वोपरि भूमिका रही। अब नेपाल में क्रान्ति की जारी प्रक्रिया आगे कैसे बढ़ती है, यह मुख्यतः इस बात पर निर्भर करता है कि आगे भी क्रान्तिकारी वाम की शक्तियाँ सही समय पर सही निर्णय और पहल की अपनी क्षमता किस हद तक प्रदर्शित करती हैं, तथा क्रान्तिकारी वामधारा अपनी विचारधारात्मक कमज़ोरियों-विचलनों से विशेषकर, दक्षिणपन्थी 'प्रैग्मेटिज़्म' के ख़तरों से मुक्त होने के लिए कितना निर्णायक क़दम उठाती है और अपनी एकता की दिशा में कितनी तेज़ गति से आगे बढ़ती है। इसके बावजूद, नेपाली क्रान्ति का आगे का रास्ता भी काफ़ी कठिन है क्योंकि आज की विपरीत विश्व-परिस्थितियों में नेपाल जैसे एक छोटे देश में सर्वहारा क्रान्ति का अग्रवर्ती विकास निश्चय ही ऐतिहासिक चुनौतियों और कठिनाइयों से जूझकर ही सम्भव हो सकेगा।

नेपाली क्रान्ति की मनोगत समस्याओं को और अधिक ठोस रूप में जानने-समझने के लिए हम नेपाल के कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी आन्दोलन के इतिहास के 1990 के बाद के कालखण्ड की आगे चर्चा करेंगे।

1990 के जनान्दोलन में ने.क.पा. (चौथी कांग्रेस) ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया और ने.क.पा. (एमाले) सहित अन्य वामपन्थी और संशोधनवादी पार्टियाँ के साथ मिलकर संयुक्त वाम मोर्चा का गठन किया। उस समय जनान्दोलन और संयुक्त वाम मोर्चे जैसे किसी संयुक्त मोर्चे के बारे में प्रचण्ड के नेतृत्व वाले ने.क.पा. (मशाल) का रुख नकारात्मक था। संयुक्त मोर्चा के बारे में मोहन बिक्रम सिंह के नेतृत्व वाले ने.क.पा. (मसाल) का रुख भी नकारात्मक था। मोहन बिक्रम सिंह संविधान सभा की माँग और राजतन्त्र के ख़ात्मे के लिए सशस्त्र संघर्ष पर बल दे रहे थे। ने.क.पा. (मसाल), ने.क.पा. (मशाल) और ने.क.पा. (मार्क्सवादी-लेनिनवादी-माओवादी) ने एक साथ मिलकर 'संयुक्त राष्ट्रीय जनान्दोलन समिति' का गठन किया। ने.क.पा. (मा-ले-मा) का गठन कृष्ण दास श्रेष्ठ के नेतृत्व में 1981 में हुआ था। यह धड़ा ने.क.पा. से 1969 में अलग हुआ था (तब यह पार्टी की बागमती ज़िला कमेटी था) और तभी से स्वतन्त्र रूप से काम कर रहा था।

1991 में ने.क.पा. (चौथी कांग्रेस), ने ने.क.पा. (मशाल) और रूपलाल विश्वकर्मा के नेतृत्व वाला सर्वहारा श्रमिक संगठन, नेपाल (पी.एल.ओ., नेपाल) की एकता के बाद ने.क.पा. (एकता केन्द्र) अस्तित्व में आया। 1990 में गठित ने.क.पा. (जनमुखी) भी इस एकता-प्रक्रिया में शामिल था। कुछ ही समय बाद डॉ. बाबूराम भट्टराई के नेतृत्व में एक ग्रुप मोहन बिक्रम सिंह के नेतृत्व वाले ने.क.पा. (मसाल) से अलग होकर ने.क.पा. (एकता-केन्द्र) में शामिल हो गया।

ने.क.पा. (एकता केन्द्र) के भीतर शुरू से ही कई अहम विचारधारात्मक-राजनीतिक प्रश्नों पर मतभेद मौजूद था जो जल्दी ही तीखे संघर्ष के रूप में सामने आया। ऊपर हमने 1985 के पूर्व ने.क.पा. (चौथी कांग्रेस) के भीतर मतभेद के मुद्दों की चर्चा की है। 1991 में ने.क.पा. (एकता केन्द्र) में शामिल होने के बाद प्रधान अन्तरविरोध के प्रश्न पर तो प्रचण्ड आदि की राय बदल चुकी थी, लेकिन संयुक्त मोर्चे के प्रश्न पर मतभेद बरकरार था। ने.क.पा. (एकता केन्द्र) के गठन के बाद डॉ. बाबूराम भट्टराई संयुक्त जनमोर्चा के संयोजक बने। उस सयम प्रचण्ड का जनान्दोलन के प्रति रुख नकारात्मक था। हालाँकि आगे चलकर फिर अलग होने के बाद संयुक्त जनान्दोलन समिति गठित करके उन्होंने उसमें हिस्सा लिया। उस समय दो प्रमुख संशोधनवादी दलों ने.क.पा. (मा) और ने.क.पा. (मा-ले) की एकता अभी नहीं हुई थी। विचारधारात्मक मुद्दों पर एकदम अलग अवस्थिति के बावजूद संयुक्त मोर्चा के अन्दर ने.क.पा. (एकता केन्द्र) की निकटता मदन भण्डारी की ने.क.पा. (मा-ले) के साथ बनती थी।

नेकपा (एकता केन्द्र) के भीतर संघर्ष का पहला मुद्दा यह था कि आज का सही मार्क्सवाद क्या है यानी अन्तरराष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन के आकलन का सवाल। प्रकाश, निर्मल लामा आदि के पक्ष का कहना था कि समाजवादी संक्रमण के दौरान वर्ग-संघर्ष जारी रहता है और पूँजीवादी पुनर्स्थापना का वस्तुगत आधार मौजूद रहता है, लेकिन हमें विपर्यय के आत्मगत कारणों की भी पड़ताल और विश्लेषण करना होगा। आज का सही मार्क्सवाद वही हो सकता है जो प्रतिक्रान्ति को रोकने की शिक्षाओं से लैस हो। प्रचण्ड, किरण, बाबूराम भट्टराई आदि का कहना था कि इन प्रश्नों का उत्तर मार्क्सवाद पहले ही दे चुका है और इन पर अध्ययन की ज़रूरत नहीं है। प्रकाश धड़े ने प्रचण्ड धड़े को जड़सूत्रवादी और प्रचण्ड धड़े ने प्रकाश धड़े को विसर्जनवादी बताया। प्रकाश धड़ा प्रतिक्रान्ति का एक आत्मगत कारण यह मानता था कि पार्टी और समाज का वैचारिक सांस्कृतिक स्तर नीचे था और पार्टी ने पहले से इस पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया। दूसरा आत्मगत कारण यह था कि पार्टी के भीतर और समाज में सर्वहारा जनवाद के अमल और विस्तार पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया। लेनिन ने इस प्रश्न पर ध्यान दिया था, लेकिन उन्हें व्यवहार का अवसर नहीं मिला। तीसरे, लेनिन ने सोवियत सत्ता पर बल दिया था, पार्टी की सत्ता पर नहीं। पार्टी का काम विचारधारात्मक- राजनीतिक मार्गदर्शन है, न कि सत्ता संचालन। लेकिन लेनिन के बाद, व्यवहारतः पार्टी ही सत्ता चलाती रही और सोवियतों की भूमिका कठपुतली की हो गयी। सर्वहारा जनवाद के विस्तार का काम होने के बजाय उसकी सीमा और संकुचित हो गयी। इस ऐतिहासिक मूल्यांकन से प्रचण्ड, भट्टराई, किरण आदि सहमत नहीं थे।

ने.क.पा. (एकता केन्द्र) के भीतर मतभेद का दूसरा महत्त्वपूर्ण मुद्दा नेपाली क्रान्ति के मार्ग का सवाल था। प्रकाश धड़े का कहना था कि हर देश के कम्युनिस्टों को यान्त्रिक ढंग से अतीत की किसी क्रान्ति के मार्ग का अनुकरण करने के बजाय, परिस्थितियों का अध्ययन करके मौलिक ढंग से अपना रास्ता निकालना चाहिए। उनका कहना था कि नेपाल में दीर्घकालिक लोकयुद्ध और आम बग़ावत के तत्त्वों का शुरू से संश्लेषण करना होगा। प्रचण्ड गुट इस सोच से असहमत था। उसने प्रकाश गुट पर सार-संग्रहवाद का आरोप लगाया, हालाँकि बाद में इन्हीं बातों को 'प्रचण्ड पथ' की अवधारणा में शामिल कर लिया।

पार्टी-निर्माण के प्रश्न पर भी दोनों पक्षों की अलग राय थी। प्रकाश आदि का कहना था कि पार्टी की लेनिनवादी अवधारणा के साथ महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति की शिक्षाओं का समावेश करना होगा। सांस्कृतिक क्रान्ति की शिक्षाएँ केवल समाजवादी संक्रमण की अवधि के लिए ही प्रासंगिक नहीं है, बल्कि क्रान्ति के पहले भी समाज में और पार्टी के भीतर सर्वहारा सांस्कृतिक आन्दोलन चलाना होगा। इस सोच को प्रचण्ड का धड़ा आदर्शवादी बता रहा था। उसका कहना था कि वर्ग-संघर्ष में जाने के बाद ये प्रश्न स्वतः हल हो जाते हैं। प्रकाश धड़ा प्रचण्ड आदि पर सचेतनता की उपेक्षा का आरोप लगा रहा था और उन्हें यान्त्रिक भौतिकवादी भटकाव का शिकार बता रहा था।

बहस का चौथा मुद्दा जनयुद्ध शुरू करने के सवाल को लेकर था। प्रचण्ड के पक्ष का कहना था कि जनयुद्ध तत्काल शुरू कर देना चाहिए, जबकि प्रकाश के पक्ष का विचार था कि तत्कालीन (यानी 1992-94 की) राष्ट्रीय-अन्तरराष्ट्रीय परिस्थितियाँ क़तई इसके लिए अनुकूल नहीं हैं। हमें पहले राजनीतिक-वैचारिक संघर्ष तेज़ करना चाहिए और जनान्दोलन को आगे बढ़ाना चाहिए, इसके बाद जनयुद्ध की परिस्थितियाँ बन सकती हैं।

इन सभी मतभेदों के बाद दोनों धड़ों के एक पार्टी में बने रहने की वस्तुगत परिस्थितियाँ नहीं रह गयी थीं। 1994 में प्रचण्ड, बाबूराम भट्टराई, किरण आदि ने अलग होकर समान्तर ने.क.पा. (एकता केन्द्र) के रूप में काम करना शुरू किया। 1996 में संगठन का नाम बदलकर ने.क.पा.(माओवादी) हो गया।

बहुदलीय लोकतन्त्र की बहाली और 1992 के चुनाव में नेपाली कांग्रेस के सत्तासीन होने के तुरन्त बाद, पूरे देश में गम्भीर आर्थिक संकट की स्थिति थी। क़ीमतें आसमान छू रही थीं। भ्रष्टाचार चरम पर था। इस अनुकूल समय में ने.क.पा. (एकता केन्द्र) और संयुक्त जनमोर्चा ने राजनीतिक आन्दोलन के लिए पहल की। ने.क.पा. (मसाल), नेपाल कम्युनिस्ट लीग और ने.क.पा. (मा-ले-मा) के साथ मिलकर एक 'संयुक्त जनान्दोलन समिति' गठित की गयी जिसके तत्त्वावधान में 6 अप्रैल की प्रसिद्ध आम हड़ताल हुई। पुलिस ने हड़ताल का बर्बर दमन किया। इस घटना ने ने.कां. और विपक्षी ने.क.पा. (एमाले) की संसदीय राजनीति के चरित्र को एकदम नंगा कर दिया। आगे चलकर मनमोहन अधिकारी के नेतृत्व में जब ने.क.पा. (एमाले) सत्तासीन हुई और फिर उसने शेर बहादुर देउबा के साथ अवसरवादी गँठजोड़ किया तो उसका चेहरा और अधिक नंगा हो गया। व्यापक मोहभंग और जनाक्रोश को 1996 तक देशव्यापी जन-उभार में परिणत कर पाने में क्रान्तिकारी वाम की शक्तियाँ विफल रहीं। इसका बुनियादी कारण राजनीतिक मतभेदों के चलते जारी बिखराव की प्रक्रिया थी। पहल ले पाने में सक्षम सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पार्टी ने.क.पा. (एकता केन्द्र) थी, लेकिन 1994 में वह फिर फूट का शिकार हुई। कभी अतिवामपन्थी तो कभी दक्षिणपन्थी अवस्थिति अपनाते रहने वाले मोहन बिक्रम सिंह अपनी पुरानी साख-प्रतिष्ठा का काफ़ी हिस्सा खो चुके थे और पहले से ही सिकुड़ती जा रही ने.क.पा. (मसाल) अब अपनी काफ़ी शक्ति और आधार खो चुकी थी। अन्य छोटी-छोटी क्रान्तिकारी वामपार्टियाँ अपनी पहल पर प्रभावी ढंग से कुछ हस्तक्षेप कर पाने में सफल नहीं थीं।

इन्हीं परिस्थितियों में ने.क.पा. (माओवादी) ने जनयुद्ध की शुरुआत की। 4 फ़रवरी 1996 को बाबूराम भट्टराई ने प्रधानमन्त्री शेर बहादुर देउबा को एक चालीस-सूत्री माँगपत्रक दिया और उन माँगों को न माने जाने की स्थिति में गृहयुद्ध की चेतावनी दी। सभी असमान सन्धियों को रद्द करना, नेपाली उद्योग, वाणिज्य और वित्तीय भूस्वामियों की ज़मीन जब्त करके उसका भूमिहीनों और ग़रीबों में वितरण करना आदि माँगपत्रक की प्रमुख माँगें थीं। 26 अप्रैल, 2006 को प्रचण्ड ने पर्वतीय क्षेत्रों और पश्चिमी नेपाल में अपना नियन्त्रण क्षेत्र स्थापित करने के उद्देश्य से सामरिक प्रयासों के लिए निर्देश जारी किया। व्यापक नेपाली जनसमुदाय ने जनयुद्ध की घोषणा को कुछ आशंकाओं के बावजूद नयी उम्मीदों के साथ देखा। जनयुद्ध के आगे बढ़ने के साथ ही ये उम्मीदें भी बढ़ती गयीं और जनता में माओवादियों का समर्थन आधार तेज़ी से बढ़ता चला गया।

(शेष अगले अंक में)

सफाईकर्मियों का जुझारू संघर्ष

(पेज 5 से आगे)

अगले दिन नगर मजिस्ट्रेट महोदय अपर नगर आयुक्त महोदय के साथ अनशनस्थल पर मण्डलायुक्त की प्रबल संस्तुति वाला पत्र लेकर आये। आन्दोलनकारियों ने पत्र को ध्यानपूर्वक पढ़ा और पाया कि आखिरकार प्रशासन ने उनकी माँगें मान ली हैं। इस जीत के बाद भूख हड़ताल खत्म करने की घोषणा की गयी। इसके बाद नगर मजिस्ट्रेट महोदय ने भूख हड़ताल पर बैठे दूसरे जत्थे के छह आन्दोलनकारियों को जूस पिलाकर भूख हड़ताल खत्म करने की औपचारिकता पूरी की।

गोरखपुर में ठेके पर काम करने वाले सफाई कर्मियों का यह आन्दोलन कई मायनों में एक मिसाल बन गया। पहली बार ठेका मज़दूरों ने इतने पुरजोर और संगठित ढंग से अपनी आवाज उठायी। दरअसल, यह आन्दोलन समाज के सबसे निचले पायदान पर खड़ी आबादी, जिसे आज भी अछूत समझा जाता है, को इंसान का दर्ज़ा दिलाने की लड़ाई थी। दूसरे, बिगुल मज़दूर दस्ता नौजवान भारत सभा, दिशा छात्र संगठन जैसे क्रान्तिकारी जन संगठनों ने इस संघर्ष को सफाई कर्मियों के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक चेतना पैदा करने की एक पाठशाला में तब्दील कर दिया। सफाईकर्मियों की रिहाइश वाले मुहल्लों में आम सभाएँ की गयीं, घर-घर सम्पर्क किया गया और महानगर की व्यापक नागरिक आबादी का समर्थन हासिल करने के लिए व्यापक पर्चा वितरण भी किया गया। अनेक संवेदनशील पत्रकार, नागरिक अधिकार कर्मी, विश्वविद्यालय के शिक्षक, अधिवक्ता, लेखक और छात्र अनशनस्थल पर पहुँचकर आन्दोलन को समर्थन और सहयोग देते रहे। नौभास और बिगुल मज़दूर दस्ता के कार्यकर्ताओं ने संघर्ष को जो जुझारू तेवर दिया उसने आम सफाईकर्मियों के अन्दर जुझारू संघर्ष चेतना पैदा की और उनके दिलों से पुलिस-प्रशासन का खौफ निकाल दिया। इस संघर्ष की आँच में तपकर आम सफाई कर्मियों के बीच से निकलकर आयी अगुवा सफाईकर्मियों की टीम और अधिक फौलादी और समझदार बनी है। आन्दोलनकारियों ने घोषणा की है कि उनका आन्दोलन केवल स्थगित हुआ है और अगर शीघ्र ही संविदा पर भर्ती करने के लिए शासनादेश नहीं आता तो इस बार और भी अधिक संगठित, जुझारू और व्यापक आन्दोलन छेड़ा जायेगा।

संविदा पर भर्ती करने के लिए शासनादेश हासिल कर लेना सफाईकर्मियों के संघर्ष का आखिरी पड़ाव नहीं है। उन्हें अभी काफ़ी लम्बी मंज़िल तय करनी है। आगे संविदा पर भर्ती और कैजुअल मज़दूरों को परमानेण्ट बनाने की लड़ाई भी उन्हें लड़नी है। इसके लिए उन्हें प्रदेश स्तर पर सफाई मज़दूरों के साथ एकता क़ायम करनी होगी। फिर अपने संघर्ष को और आगे बढ़ाते हुए देशव्यापी स्तर पर म्ज़दूरों के साथ एकता कायम करते हुए समूचे पूँजीवादी निज़ाम के खिलाफ इंक़लाबी संघर्ष की ओर आगे बढ़ना होगा।

एक "नये नेपाल" के लिए : बाबूराम भट्टराई से बातचीत

(पेज 12 से आगे)

ही कम है। इसलिए हम इस प्रकार की ज़मींदारी को समाप्त करना चाहते हैं और 'ज़मीन जोतने वाले की' का सिद्धान्त लागू करना चाहते हैं। खेतिहर ज़मीन का पुनर्वितरण किया जायेगा। इसलिए हम एक सीमा निर्धारित करेंगे, जैसे कि चार या पाँच हेक्टेयर की और इससे ऊपर की ज़मीन को राज्य द्वारा अपने अधिकार में लेकर किसानों के बीच पुनर्वितरित कर दिया जायेगा। तो यह है भूमि सुधार का एक पहलू। दूसरा पहलू है कि हम ग़रीब किसानों को संगठित करेंगे, क्योंकि उनमें से ज्यादातर बहुत छोटी ज़मीन के मालिक होंगे। मैं आपको पहले ही बता चुका हूँ, 0.5 हेक्टेयर से भी कम ज़मीन के मालिक। और वे ज़्यादातर गुजारे के लिए ही खेती में लगे हुए हैं। इस तरह व्यक्तिगत खेती-बाड़ी से, वे अपनी आर्थिक स्थिति कभी नहीं सुधार सकते हैं। हम इन ग़रीब किसानों को कोऑपरेटिवों में संगठित करना चाहते हैं। यह इसका दूसरा पहलू है। और तीसरे, हम कृषि का आधुनिकीकरण मशीनीकरण, आधुनिक सिंचाई, और इसी तरह की चीज़ें करना चाहते हैं।

प्रश्न : और निर्यातोन्मुख अर्थव्यवस्था वाली कृषि के बरअक्स देश के अन्दर खाद्यान्न सुरक्षा पर केन्द्रित खेती के सवाल पर आप क्या सोचते हैं?

हमारा ज़ोर विश्व बैंक और खाद्य एवं कृषि संगठन द्वारा निर्धारित की गयी आर्थिक नीति से भिन्न होगा। इन दोनों की नीतियाँ निर्यातोन्मुखी हैं, और इनसे किसान खाद्यान्न पैदा करने के लिए प्रोत्साहित नहीं होते, इसके बजाय वे निर्यात के लिए नकद फसलों की पैदावार करने को प्रोत्साहित होते हैं। इससे निर्भरता बढ़ गयी है, खाद्यान्न सुरक्षा घट गयी है, और इस तरह आप देखिये खाद्यान्न संकट बढ़ रहा है। यह विश्व बैंक की नीतियों ग़लत नीतियों का ही एक परिणाम है। इसलिए हम उस नीति का अन्धानुकरण नहीं करने वाले हैं। पहली बात, किसानों की खाद्यान्न सुरक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जायेगी। और इसके बाद ही, दूसरे नम्बर पर, वे निर्यात के लिए पैदा कर सकते हैं। तो यही हमारी प्राथमिकता होगी।

प्रश्न : हम जानते हैं कि अब आपके जाने का समय हो रहा है। क्या आप उत्तरी अमेरिका के वामपन्थियों से कुछ कहना चाहेंगे?

देखिये, यह संकट अन्तरराष्ट्रीय पैमाने का है : यह सीधे-सीधे सर्वहारा विचारधारा और साम्राज्यवादी विचारधारा के बीच की लड़ाई है। यह बात इस समूचे तथाकथित वैश्वीकरण पर लागू होती है। वैश्वीकरण ने दो वर्गों के इस अन्तर्विरोध को तीखा कर दिया है। इसलिए साम्राज्यवाद का केन्द्र होने के कारण, मेरे खयाल से, उत्तरी अमेरिका के मज़दूर वर्ग और वामपन्थी शक्तियों को स्वयं को संगठित करना चाहिए और साम्राज्यवाद के खिलाफ वहाँ जितना मज़बूत आन्दोलन खड़ा होगा, वह तीसरी दुनिया के देशों में वामपन्थी और सर्वहारा आन्दोलन के लिए उतना ही मददगार होगा, क्योंकि तीसरी दुनिया के देश साम्राज्यवाद द्वारा सबसे ज्यादा शोषित-उत्पीड़ित हैं। अगर साम्राज्यवादी देशों में मज़दूर वर्ग के आन्दोलन और वामपन्थी आन्दोलन मज़बूत होते हैं तो इससे तीसरी दुनिया के देशों के क्रान्तिकारी आन्दोलन को प्रत्यक्ष सहायता मिलेगी। उत्तरी अमेरिका के अपने साथियों से हमारी यही अपील है। उन्हें साम्राज्यवाद के ख़िलाफ़ अपने संघर्ष को और अधिक तीखा करना चाहिए। इससे हमारे देशों में हमारे आन्दोलन को सहायता मिलेगी।

प्रश्न : वहाँ के मज़दूर स्वयं को तीसरी दुनिया के देशों के मज़दूरों के साथ प्रतिस्पर्द्धा करने को बाध्य कर दिया गया महसूस करते हैं क्योंकि उनकी सारी नौकरियाँ, यानी वहाँ की पूँजी तीसरी दुनिया में जा रही है और वे बेरोजगार हो रहे हैं।

इसका कारण साम्राज्यवाद की प्रकृति है। यह तीसरी दुनिया के देशों की ग़लती नहीं है। साम्राज्यवादी तीसरी दुनिया के देशों का और अधिक शोषण करना चाहते हैं।

प्रश्न : बिल्कुल सही। वे इन देशों का इस्तेमाल अपने यहाँ के मज़दूरों को कमज़ोर करने के लिए करना चाहते हैं...

वे ग़रीब देशों के मज़दूरों का इस्तेमाल अमीर देशों के मज़दूरों के ख़िलाफ़ करना चाहते हैं। इसके अलावा, मेरा सोचना है कि हमें अन्तरराष्ट्रीय मज़दूरवर्गीय एकता के लिए प्रयास करना चाहिए और हमें साम्राज्यवाद के ख़िलाफ़ अपनी नीतियों को समन्वित करना चाहिए। अगर आपके पास यह राजनीतिक समझ और राजनीतिक चेतना नहीं होगी, तो साम्राज्यवादी देशों का मज़दूर वर्ग यह सोचेगा कि निर्भर देशों या तीसरी दुनिया के देशों के मज़दूर ही उनके दुश्मन हैं। उनके दुश्मन मज़दूर नहीं हैं; बल्कि साम्राज्यवाद उनका दुश्मन है। तो मेरा यह सोचना है कि साम्राज्यवादी देशों के मज़दूरों में यह चेतना विकसित की जानी चाहिए।

(ई.पी.डब्ल्यू. से साभार)

अनुवाद : चारुचन्द्र पाठक

हिटलर को दरअसल किसने हराया...

(पेज 13 से आगे)

अख्तियार करने में सहूलियत देती थीं, जहां से हमारे सैनिक मशीन-गनों और टॉमी-गनों के साथ आगे बढ़ते जर्मनों को मार-गिरा सकते थे।''

चुइकोव कहते हैं कि लाल योद्धा जली-झुलसी पत्थर की इमारतों को इस्तेमाल करना ज्यादा पसन्द करते, क्योंकि आक्रमण के दौरान नाजियों को रोशनी करने के लिए जलाने को कुछ भी नहीं मिल पाता। इनमें तरह-तरह के आकार की किलेबन्दियां की जातीं - जिनमें से कुछ की रक्षा जवानों का कोई एक छोटा दस्ता करता, तो कुछ की रक्षा एक पूरी बटालियन करती। किलेबन्दियों को इस प्रकार तैयार किया जाता कि उनसे चारों दिशाओं में गोलीबारी की जा सके और कई दिनों तक सम्पर्क-विच्छेद हो जाने के बाद भी लड़ाई जारी रखी जा सके।

लाल सैनिक खाइयां निर्मित करते तथा सीवरों का इस्तेमाल किलेबन्दियों को उनके इर्दगिर्द की इमारतों के साथ जोड़ने में करते। किलेबन्दियों के बीच से गुजरने की कोशिश करता हुआ दुश्मन चौतरफा गोलीबारी में फंस जाता। चुइकोव लिखते हैं: ''किलेबन्दियों का एक ग्रुप, जिसका एक ही सामान्य फायरिंग नेटवर्क होता था, और चौतरफा रक्षण प्रदान करते हुए प्रतिरोध का एक केन्द्र भी होता था।''

स्तालिनग्राद की युद्धरत महिलाएं

महिलाएं स्वेच्छा से सेना की मदद करतीं - वे प्राय: उन भारी नुकसानों की भरपाई कर देतीं जो युद्ध के आरम्भिक दौर में लाल सेना को उठाने पड़ रहे थे।

वासिली चुइकोव लिखते हैं: ''यह कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं है कि युद्ध में महिलाएं हर जगह पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर लड़ीं...। मोर्चे पर दौरा करने वाला कोई भी यह देख सकता था कि महिलाएं तोपरोधी इकाइयों में बन्दूकचियों का काम कर रही थीं, जर्मन हवाबाजों के विरुद्ध लड़ाई में विमानचालकों का काम कर रही थीं, हथियारबन्द नावों के कैप्टन के रूप में, वोल्गा जहाजी बेड़ों में काम करती हुईं, उदाहरण के तौर पर, नदी के बायें तट से दायें तट पर सामान नावों में लादकर आने-जाने को काम बेहद कठिन दशाओं में कर रहीं थीं।

''स्तालिनग्राद के विमानभेदी दल के विमानभेदी तोपखाने और सर्चलाइट-दोनों ही जगहों पर तैनात बन्दूकचियों में ज्यादातर महिलाएं ही थीं...। जब उनके चारों तरफ बम फटने लगते और स्थिति यह हो जाती कि सिर्फ सही-सही निशाना साधकर फायर करना ही नहीं, बल्कि बन्दूक लिए खड़े रह पाना भी असम्भव लगने लगता, तब भी वे अपनी बन्दूकों से चिपकी रहतीं और फायरिंग करती रहतीं। आग और धुआं और फूटते बमों के बीच वे अन्त तक अपने स्थान पर ऐसे डटी रहतीं, मानो उन्हें यह मालूम ही न पड़ा रहा हो कि उनके इर्द-गिर्द की सभी चीजें विस्फोटित होकर हवा में उड़ रही हैं। यही वजह थी कि शहर पर (जर्मन वायुसेना के) हमलों से अपनी विमान-भेदी टुकड़ी की भारी क्षति उठाकर भी, वे उनपर जबर्दस्त गोलीबारी करतीं, जिससे हमेशा ही हमलावर विमान को भारी क्षति उठानी पड़ती। हमारी महिला विमानभेदी बन्दूकचियों ने जलते शहर के ऊपर दुश्मन के दर्जनों विमानों को मार गिराया।''

सोवियत संघ के रात्रिकालीन उड़ान भरने वाले बमवर्षक विमानों के ज्यादातर मशहूर पायलटों में से कुछ तो महिलाएं ही थीं।

नाजियों पर घेरेबन्दी का कसता फन्दा

''जर्मन बड़े मज़ाकिया जीव हैं, जो चमकदार लेदर बूट पहनकर स्तालिनग्राद जीतने चले आये हैं। उन्होंने समझा होगा कि यहां सैर-सपाटा करने को मिलेगा!''

–एक लाल सैनिक

19 नवम्बर को स्तालिनग्राद में हर किसी ने कहीं दूर तोप दगने की आवाज़ सुनी – महान सोवियत प्रत्याक्रमण चालू हो गया था। स्तालिनग्राद के बहादुर लाल योद्धा काफी लम्बे समय तक अपने मोर्चे पर डटे रहे थे ताकि उनके कामरेड इस पूरी जर्मन नाजी सेना पर अपनी घेरेबन्दी कस डालें।

जर्मन कमाण्डरों को पता था कि एक विशाल सोवियत सेना गठित हो रही थी–लेकिन उन्होंने सपने में भी नहीं सोचा था कि सोवियत जनता इतने बड़े पैमाने पर प्रत्याक्रमण संगठित कर लेगी। दस लाख से अधिक की संख्या में सोवियत फौजें अविश्वसनीय रफ्तार से स्तालिनग्राद के उत्तर और दक्षिण से आगे बढ़ीं। सिर्फ साढ़े चार दिनों में ही लाल सेना ने जर्मन की छठवीं सेना के सभी 3,30,000 सैनिकों को एक लौह शिकंजे में कस लिया। भाग निकालने की दो जर्मन कोशिशें नाकाम कर दी गयीं। शहर के अन्दर 31 जनवरी तक लड़ाई चलती रही, और अन्त में जर्मन जनरल फॉन पाउलस और उसके मुख्यालय को गिरफ्त में ले लिया गया।

यह इतिहास में एक महानतम विजय थी। स्तालिनग्राद की गलियों में लड़ने वाले योद्धाओं ने दुनिया को भौंचक्का कर दिया। यहां तक कि अमेरिकी शासक वर्ग के कट्टर साम्राज्यवादी जनरल डगलस मैकार्थर तक को कहना पड़ा: ''जितने बड़े पैमाने पर और जिस शौर्य के साथ यह युद्ध लड़ा गया उससे जो सैनिक उपलब्धियां हासिल हुई हैं वे समूचे इतिहास में अप्रतिम हैं।''

स्तालिनग्राद हिटलरवादी जर्मनी के अन्त की शुरुआत साबित हुआ। उसके बाद तो लाल सेना ने नाजी आक्रमणकारियों को सोवियत भूमि से निष्कासित करके बर्लिन तक खदेड़ दिया, जहां हिटलर और उसके शासन को नेस्तनाबूद कर दिया गया।

स्तालिनग्राद – दुनिया के भविष्य के लिए लड़ाई

जब 1941 में नाजियों ने सोवियत संघ पर आक्रमण किया तो पूँजीवादी जगत ने घोषणा कर दी कि साम्यवाद मर गया। लेकिन उन्होंने सोवियत समाजवाद की ताकत और अपने समाज की रक्षा करने वाले सोवियत जनगण की अकूत इच्छाशक्ति को कम करके आँका। स्तालिनग्राद के कंकड़-पत्थरों में आप इस सच्चाई का दर्शन कर सकते हैं कि जनगण हथियारों के जखीरे से लैस और तकनीकी रूप से उन्नत पूँजीवादी शत्रु को कैसे परास्त कर सकते हैं।

इस विजय की कुंजी कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व और दशकों तक चले क्रान्तिकारी वर्ग-संघर्ष के बाद तैयार हुए जनता के संगठन में थी। स्तालिन के आह्वानपर, हजारों कम्युनिस्ट फौज में भर्ती होकर मोर्चे पर जा पहुंचते। लड़ाई के हर मोर्चे पर, कम्युनिस्ट सबसे निडर और आत्म बलिदानी योद्धा के रूप में आगे बढ़ते जाते। जब लाल सेना को जर्मन कतारों में घुसपैठ करने के लिए स्पेशल स्काउट यूनिटों की आवश्यकता पड़ती तो वह कम्युनिस्ट युवा संगठन से ही तमाम भर्तियां कर लेती। गली-गली की लड़ाई की अफरा-तफरी के बीच, कम्युनिस्ट हर जगह राजनीतिक काम भी करते–जैसे वे युद्धरत जन समुदायों को यह समझने में मदद करते कि इस मारने और मरने में क्या उद्देश्य निहित था।

जहां जर्मन सैनिक निराशा और भय में डूब जाते, वहीं इसके विपरीत, लाल योद्धा साहसपूर्वक मौत का सामना करते और निडर होकर लड़ते, यहां तक कि उस हालत में भी, जब वे एक-एक करके कटने-मरने लगते और घिर जाते।

दुनिया के लोगों पर स्तालिनग्राद के याद्धाओं का भारी ऋण है : हिटलर पर उनकी विजय के लिए भी, और उनसे हमें विरासत में मिले क्रान्तिकारी शहरी युद्ध के सबकों के लिए भी।

(समाप्त)

मई दिवस की क्रान्तिकारी विरासत आगे बढ़ाने का आह्वान

(पेज 16 से आगे)

में काम के हालात बेहद खराब हैं। मज़दूर अधिकारों को वापस छीन लिया गया है। ऐसे में मई दिवस के गौरवशाली अतीत से प्रेरणा लेने की जरूरत है। वक्ताओं ने कहा कि मई दिवस की विरासत सँभालने के लिए तमाम ट्रेडयूनियनों, नकली वामपंथियों समेत सारी चुनावी पार्टियों को किनारे कर आज नये सिरे से क्रान्तिकारी संगठन बनाने होंगे और वर्ग समाज के खात्मे का नारा अपने झण्डे पर लिख देना होगा। यही उन असंख्य मज़दूरों को हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

बिगुल मज़दूर दस्ता की संगीत टोली द्वारा 'रउरा सासना क बाट ना जवाब भाई जी', 'हम मेहनत करने वाले', 'हम मेहनतकश जग वालों से' तथा 'यकुम मई' गीत गाये गये।

दिल्ली

बिगुल मज़दूर दस्ता और नौजवान भारत सभा की ओर से मई दिवस के मौके पर झिलमिल इण्डस्ट्रियल एरिया की मज़दूर बस्तियों में पूरे दिन का सघन प्रचार अभियान चलाया गया। पहली मई को सुबह से ही अम्बेडकर कैम्प और राजीव कैम्प बस्तियों में जगह-जगह छोटी-छोटी नुक्कड़ सभाएँ करते हुए और पर्चे बाँटते हुए कार्यकर्ताओं की टोली ने घूमना शुरू कर दिया। सभाओं में वक्ताओं ने कहा कि पूँजीवादी पार्टियों और नकली कम्युनिस्टों से जुड़ी ट्रेड यूनियनों के दलाल नेताओं के जाल में फँसकर मज़दूरों को कुछ नहीं हासिल होगा। अकेले-अकेले लड़ने से कुछ भी नहीं होगा। मज़दूरों को अपने इलाकाई पैमाने के संगठन बनाने होंगे।

सभाओं, पर्चा वितरण और गीतों का सिलसिला रात तक जारी रहा।

पंजीयन संख्या - 71980/99, डाक पंजीयन संख्या - LW-NP/349/2006-08

मई दिवस की क्रान्तिकारी विरासत आगे बढ़ाने का आह्वान

बिगुल संवाददाता

गोरखपुर। नौजवान भारत सभा और नेपाली जन अधिकार सुरक्षा समिति ने यहाँ अन्तरराष्ट्रीय मज़दूर दिवस संयुक्त रूप से मनाया और भारत एवं नेपाल की मेहनतकश जनता के भाईचारे को मजबूत बनाने का साझा संकल्प किया। इस अवसर पर नगर निगम परिसर स्थित रानी लक्ष्मीबाई पार्क से सायं एक जुलूस निकाला गया जो टाउनहाल चौराहा, गोलघर, गणेश चौराहा, इन्दिरा बाल विहार होते हुए बिस्मिल तिराहे पर पहुँचकर सभा में तब्दील हो गया।

जुलूस में शामिल लोग 'अन्तरराष्ट्रीय मज़दूर दिवस ज़िन्दाबाद,' 'साम्राज्यवाद-पूँजीवाद का नाश हो,' 'भारत और नेपाल की जनता का भाई-चारा ज़िंन्दाबाद,' 'दुनिया के मज़दूरों एक हो,' 'सारी सत्ता मेहनतकश को,' इंक़लाब ज़िन्दाबाद' आदि नारे लगाते और पर्चे बाँटते चल रहे थे। लोग हाथों में आकर्षक तख्तियाँ भी लेकर चल रहे थे जिनपर विभिन्न नारे लिखे हुए थे।

बिस्मिल तिराहे पर आम सभा को सम्बोधित करते हुए नौजवान भारत सभा के संयोजक अरविन्द सिंह ने कहा कि शिकागो के शहीद मज़दूरों की आँखों में साम्राज्यवादी-पूँजीवादी शोषण को खत्म कर न्याय और समता पर आधारित नया समाज बनाने का सपना था। उन्होंने कहा कि इस सपने को हक़ीक़त में बदलने के लिए देश में मज़दूर वर्ग की नयी क्रान्तिकारी पार्टी की ज़रूरत है क्योंकि लाल झण्डा उड़ाने वाली नक़ली कम्युनिस्ट पार्टियाँ मज़दूर वर्ग से गद्दारी कर चुकी हैं। नौभास जिला संयोजन समिति के सदस्य प्रमोद कुमार ने गोरखपुर महानगर के सभी असंगठित क्षेत्र के मज़दूरों का आह्वान किया कि वे चुनावी पार्टियों के भुलावे में आने के बजाय अपनी स्वतन्त्र क्रान्तिकारी यूनियनें बनाएँ।

सभा को सम्बोधित करते हुए नेपाली जन अधिकार सुरक्षा समिति के गोरखपुर जिलाध्यक्ष रंजन केसी ने कहा कि भारत और नेपाल के बीच 1950 की सन्धि सहित सभी असमान

गोरखपुर में मई दिवस के जुलूस का दृश्य

सन्धियों की समीक्षा कर पंचशील के सिद्धान्तों के आधार पर नयी सन्धियाँ करने से भारत और नेपाल के सम्बन्ध और मज़बूत बनेंगे। सभा को नौजवान भारत सभा के उदयभान और अवधेश तथा दिशा छात्र संगठन के प्रशान्त और अपूर्व ने भी सम्बोधित किया।

नेपाली जन अधिकार सुरक्षा समिति की केन्द्रीय सलाहकार परिषद के सदस्य एम.पी. शर्मा ने कहा कि भारत और नेपाल की मेहनतकश जनता के बीच भाईचारे का एक लम्बा इतिहास रहा है। नेपाल की सत्ता पर काबिज सामन्ती शक्तियों ने इस भाईचारे को बिगाड़ने की लगातार कोशिशें कीं लेकिन वे कामयाब नहीं हुए। उन्होंने कहा कि संविधान सभा के ताज़ा चुनावों में जनता ने इन जनविरोधी प्रतिक्रियावादी शक्तियों को नकार दिया है और माओवादियों के नेतृत्व में नयी सरकार गठित कर जनवादी गणराज्य बनाने का जनादेश दिया है।

नोएडा

मई दिवस की महान क्रान्तिकारी परम्परा को मेहनतकशों के दिलों में फिर से पैदा करने के लिए बिगुल मज़दूर दस्ता और नौजवान भारत सभा की नोएडा इकाई द्वारा मई दिवस जुलूस और सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किया गया। मई दिवस के महत्त्व को बताते हुए किये गये सघन प्रचार की बदौलत लोगों में पहले से ही इस कार्यक्रम को लेकर उत्सुकता थी।

कार्यक्रम की शुरुआत सुबह 9 बजे सेक्टर 9 की झुग्गी से एक जुलूस निकाल कर की गयी। मज़दूरों में अधेड़, नौजवान मज़दूरों के साथ महिला मज़दूरों ने भी गर्मजोशी के साथ शिरकत की। सभी लोगों ने सिर पर लाल पट्टियां बांधी हुई थीं, गले में एप्रेन और हाथों में तख्तियां थीं। 'मई दिवस अमर रहे', 'मई दिवस का ये पैगाम, जागो मेहनतकश आवाम', और 'मज़दूरों की वर्ग एकता जिन्दाबाद' आदि जोशीले नारों से फिजा गूंज उठी। मई दिवस के महत्त्व पर नुक्कड़ सभा के साथ जुलूस शुरू हुआ। बीच-बीच में नुक्कड़-चौराहों पर छोटी-छोटी सभाएं करते हुए जुलूस सेक्टर 8, 9 और 10 की झुग्गियों की संकरी और आड़ी-तिरछी गलियों से होकर गुजरा। इस दौरान बड़ी संख्या में पर्चे बाँटे गये । नुक्कड़ सभाओं में मई दिवस के बारे में बताया गया कि यह मज़दूरों का अपना त्यौहार है। यह दिन शिकागो के मज़दूरों द्वारा 'काम के घण्टे आठ करो' आन्दोलन की याद में पूरी दुनिया भर में मेहनतकशों द्वारा मनाया जाता है। इस आन्दोलन के नेताओं पार्सन्स, स्पाइस, फिशर और एंजिल को पूंजीपतियों की टुकड़खोर सरकार ने झूठा मुकदमा चलाकर फांसी दे दी थी। लेकिन मज़दूरों को दबाया न जा सका। वो दोगुने वेग से आगे बढ़े और आखिरकार पूरी दुनिया में काम के घण्टे आठ, सामाजिक सुरक्षा की गारण्टी आदि कुछ अधिकार हासिल करके ही दम लिया। इन चार मज़दूर नेताओं और असंख्य मज़दूरों की कुर्बानियां रंग लायीं। यह दिन आज भी हम सबको अपने हकों-अधिकारों के लिए लड़ने की प्रेरणा देता है और अपने वर्ग की ताकत में अटूट भरोसा पैदा करता है। आज मई दिवस मनाने का मतलब उन शहीदों की क्रान्तिकारी विरासत को संजोकर, वर्ग समाज के खात्मे तक न रुकने का संकल्प लेना ही हो सकता है।

जुलूस की समाप्ति के बाद एक साथी के घर पर विश्राम के दौरान एक अनौपचारिक गोष्ठी हो गई। मालिकों, मैनेजर, ठेकेदार और इनकी सेवारत चुनावी पार्टियों, सरकार, अदालत, पुलिस-प्रशासन को लेकर मज़दूर साथियों के साथ चर्चा छिड़ गयी। इसके साथ मज़दूरों के राजकाज और आज मज़दूरों का क्रान्तिकारी संगठन खड़ा करने की चुनौतियों और तरीकों पर विस्तार से बातचीत हुई।

शाम 6.30 बजे से सांस्कृतिक कार्यक्रम शुरू हुआ। स्टेज के पीछे टंगे पर्दे लिखा था-'आज घोषणा करने का दिन / हम भी हैं इंसान / हमें चाहिए बेहतर दुनिया / करते हैं ऐलान / घृणित दासता किसी रूप में / नहीं हमें स्वीकार / मुक्ति हमारा अमिट स्वप्न है / मुक्ति हमारा गान'। इसके अतिरिक्त कार्यक्रम स्थल पर मई दिवस के शहीदों पार्सन्स, स्पाइस, फिशर और एंजिल के चित्र भी लगे थे। कार्यक्रम की शुरुआत मज़दूरों के अन्तरराष्ट्रीय गीत 'इण्टरनेशनल' गाकर हुई। इसके बाद मई दिवस आन्दोलन के बारे में, शिकागो के मज़दूर आन्दोलन और उनके महान संघर्षों के साथ-साथ आज मई दिवस के महत्त्व के साथ आज के हालात पर वक्ताओं ने बातें रखीं। आज नोएडा समेत तमाम औद्योगिक क्षेत्रों

(पेज 15 पर जारी)

ठेका प्रथा के खिलाफ सफाईकर्मियों का जुझारू संघर्ष

शुरुआती कामयाबी मिली, मुकम्मल जीत अभी बाकी

बिगुल संवाददाता

गोरखपुर। नगर निगम के सफाई कार्यो में निजी ठेका प्रथा समाप्त कर सीधे संविदा पर भर्ती करने की माँग को लेकर लगभग एक महीने तक चले जुझारू संघर्ष के आगे आखिरकार नगर निगम एवं जिला प्रशासन को झुकना पड़ा। प्रशासन को उनकी माँगें मानते हुए संविदा पर भर्ती के लिए शासन को सिफारिशी पत्र लिखने के मजबूर होना पड़ा। साथ ही, श्रम कानूनों को लागू नहीं करने वाले ठेकेदारों के खिलाफ कानूनी कार्रवाई के लिए भी उसे बाध्य होना पड़ा है। लेकिन सफाईकर्मियों को अभी शुरुआती कामयाबी मिली है, मुकम्मिल जीत अभी बाक़ी है। इसलिए उन्हें अपनी जुझारू एकता को और मजबूत बनाते हुए आगे क़दम बढ़ाना होगा।

सफाई मज़दूर यूनियन के बैनर तले सफाईकर्मियों ने अपने संघर्ष की शुरुआत विगत 16 अप्रैल को नगर आयुक्त को ज्ञापन सौंपकर की। उनकी प्रमुख माँग थी कि नगर निगम के सफाई कार्यों में ठेका प्रथा समाप्त की जाये और अन्य नगर निगमों की भाँति गोरखपुर में भी सीधे संविदा पर भर्ती की जाये। विगत तीन वर्षों से गोरखपुर में ठेकेदारों के बर्बर शोषण-उत्पीड़न के खिलाफ सफाईकर्मियों का आक्रोश फूटने का कारण यह था कि नगर निगम की तमाम मान्यताप्राप्त यूनियनों ने कभी भी ठेका मज़दूरों के शोषण के खिलाफ आवाज़ नहीं उठायी। इसलिए उन्होंने अपनी स्वतन्त्र यूनियन बनाकर संघर्ष छेड़ने का निर्णय लिया। इस संघर्ष को संगठित करने में संयुक्त रूप से नौजवान भारत सभा, बिगुल मज़दूर दस्ता और दिशा छात्र संगठन के साथ भाकपा (माले) और उसके जन संगठनों की अहम भूमिका रही।

जब सफाईकर्मियों के ज्ञापन को नगर निगम प्रशासन ने नोटिस नहीं लिया तब उन्होंने 18 अप्रैल को नगर विकास मन्त्री का पुतला फूँककर अपनी माँगों के प्रति शासन-प्रशासन का ध्यान खींचने की कोशिश की। इसके बाद तैयारी करके वे 21 अप्रैल को मण्डलायुक्त कार्यालय पर धरने पर बैठ गये। धरने के पाँचवें दिन मण्डलायुक्त कार्यालय के सामने उग्र प्रदर्शन और नारेबाजी के बाद मण्डलायुक्त को नगर निगम के सम्बन्धित आधिकारियों से वार्ता कर मसले का हल निकालने के लिए अपर मण्डलायुक्त (प्रशासन) को निर्देश देने के लिए बाध्य होना पड़ा।

25 अप्रैल को अपर मण्डलायुक्त (प्रशासन) की मध्यस्थता में प्रभारी नगर आयुक्त, नगर स्वास्थ्य अधिकारी और अपर जिलाधिकारी (नगर) की उपस्थिति में जो वार्ता हुई उसमें सफाईकर्मियों के प्रतिनिधियों द्वारा अपना पक्ष तर्कसंगत ढंग से और दृढ़ता से रखने के बाद प्रभारी नगरआयुक्त और नगर स्वास्थ्य अधिकारी बचाव की मुद्रा में आ गये। अपर मण्डलायुक्त (प्रशासन) और अपर जिलाधिकारी (नगर) ने ऊपरी तौर पर ही सही सफाईकर्मियों के पक्ष का समर्थन करते हुए न्यूनतम मज़दूरी कानून लागू न करने वाले ठेकेदारों के विरुद्ध क़ानूनी कार्रवाई के लिए कहा! संविदा पर भर्ती की प्रक्रिया के बारे में प्रभारी नगरआयुक्त ने कहा कि चूँकि यह नीतिगत निर्णय है इसलिए नगरआयुक्त के विदेश दौरे से वापस लौटने के बाद ही निर्णय लिया जा सकता है। सफ़ाईकर्मियों के प्रतिनिधियों ने नगर आयुक्त की मौजूदगी में 8 मई को अगली वार्ता के लिए यह सोचकर सहमति दे दी कि इस दौरान आन्दोलन को व्यापक बनाने के लिए तैयारी कर ली जायेगी।

8 मई को अपर मण्डलायुक्त (प्रशासन) ने सूचना दी कि नगरआयुक्त महोदय विदेश दौरे से वापस नहीं आये हैं इसलिए वार्ता नहीं होगी लेकिन अगली वार्ता कब होगी इसके बारे में कोई सूचना नहीं दी। इस दिन काफ़ी संख्या में सफ़ाईकर्मी इकट्ठा हुए थे। उन्होंने तय किया कि जब तक मुद्दा हल नहीं होगा वे मण्डलायुक्त कार्यालय परिसर में ही डटे रहेंगे। उसी दिन से धरना शुरू हो गया। धरना स्थल पर दो दिन तक जोरदार सभाएँ चलती रहीं। जब नगरनिगम एवं जिलाप्रशासन के कान पर जूँ तक नहीं रेंगी तो 10 मई से अनिश्चितकालीन भूख हड़ताल शुरू हो गयी। सफ़ाई मज़दूर यूनियन के संयोजक रसीद अली, कार्यकारिणी सदस्य मो. यूसुफ और रसूल अहमद के साथ नौजवान भारत सभा के कार्यकर्ता उदयभान और इंक़लाबी नौजवान सभा के बजरंगी लाल निषाद भी भूख हड़ताल पर बैठ गये।

तीन दिनों तक भूख हड़ताल को स्थानीय प्रशासन ने नोटिस में नहीं लिया। प्रशासन की संवेदनहीनता का आलम यह था कि भूख हड़तालियों के चिकित्सकीय परीक्षण के लिए कोई डॉक्टर तक नहीं पहुँचा। चौथे दिन जब अनशनस्थल पर मुख्यमन्त्री मयावती का पुतला फूँका गया तब प्रशासन में हड़कम्प मचा और आनन-फानन में नगर मजिस्ट्रेट रविशंकर गुप्त सी.ओ. कैण्ट के साथ पहुँचे। उन्होंने चिकित्सकीय जाँच के लिए डॉक्टर तो बुलवाया लेकिन उनकी मुख्य चिन्ता मुद्दे को हल करने के बजाय भूख हड़ताल तुड़वाकर 'शान्ति व्यवस्था' क़ायम करने की थी। जिला प्रशासन की पहल पर उसी दिन अपर मण्डलायुक्त (प्रशासन) की मध्यस्थता में अपर नगर आयुक्त सत्य प्रकाश पाण्डेय के साथ एक वार्ता हुई जिसमें यह सहमति बनी कि नगर आयुक्त महोदय गोरखपुर में ठेका प्रथा समाप्त कर संविदा पर भर्ती करने के लिए शासन को प्रबल सिफारिश करेंगे और न्यूनतम मज़दूरी क़ानून सहित अन्य श्रम कानूनों का उल्लंघन करने वाले ठेकेदारों के खिलाफ कानूनी कार्रवाई करेंगे। वार्ता में सहमति बनने के बाद भी पहले तो नगर निगम प्रशासन शासन को पत्र लिखने में तरह-तरह के बहानों से टालमटोल करता रहा फिर जो पत्र लेकर अपर नगर आयुक्त महोदय आये उसमें गोलमाल किया गया था जिसे आन्दोलनकारियों ने नामंजूर कर दिया। भूख हड़ताल जारी रही।

(पेज 5 पर जारी)

मुद्रक, प्रकाशक और स्वामी डा. दूधनाथ द्वारा 69, बाबा का पुरवा, निशातगंज, लखनऊ से प्रकाशित एवं उन्हीं के द्वारा वाणी ग्राफिक्स, अलीगंज, लखनऊ से मुद्रित। कम्पोजिंगः कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ।
सम्पादक : **डा. दूधनाथ, सुखविन्दर** • सम्पादकीय पता : **69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006** • सम्पादकीय उपकार्यालय : जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ